वर्ष २ अंक १९
विक्रम संवत् २०७६ मार्गशिर्ष
दिसम्बर २०१९

आर्ष क्रान्ति

वैदिक समाज व्यवस्था के लिए समर्पित बहुभाषी विचार पत्रिका

हुतात्मा स्वामी श्रद्धानंद विशेषांक

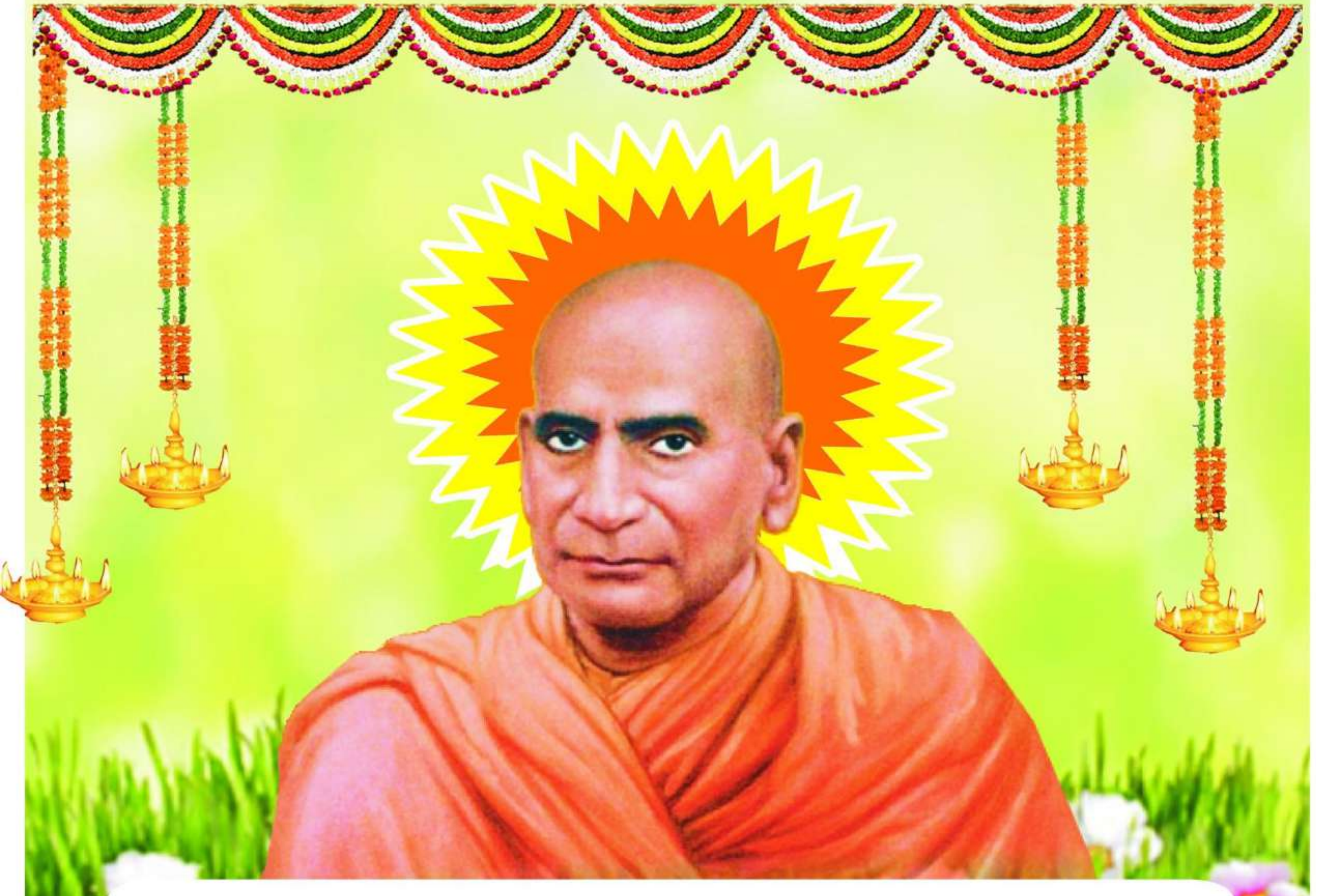

आर्यावर्त के आकाश में चमका एक नक्षत्र, जिसकी कीर्ति कृत धन्य है चमक रहा सर्वत्र।
धन्य हुई मां भारती , धन्य हुआ हर प्राण, जिसने प्राण देकर हमें, दिलायी परतंत्रता से त्राण
जिसमें ऋषि के उद्देश्यों को , पूरा करने का संकल्प, जिसके हृदय में सदा, बसता था युग–कल्प
हम ऐसे युगचेता स्वामी को, करते श्रद्धा से याद , जिससे मानवता को मिलती रहे नव प्रेरणा की खाद

– अखिलेश आर्येंदु

ओ३म्

आर्य लेखक परिषद् का मुख पत्र

आर्ष क्रान्ति

दिसम्बर २०१९

वर्ष—२ अंक—१५,
विक्रम संवत् २०७५
दयानान्दाब्द— १९५
कलि संवत् — ५११९
सृष्टि संवत् —१,९६,०८,५३,११९

प्रधान सम्पादक
वेदप्रिय शास्त्री
(७६६५७६५११३)
❖
सम्पादक
अखिलेश आर्येन्दु
(८१७८७१०३३४)
❖
सह सम्पादक
प्रांशु आर्य (कोटा)
(९९६३९७०९४०)
❖
आकल्पन
प्रवीण कुमार (महाराष्ट्र)
❖
सम्पादकीय कार्यालय
ए—११,त्यागी विहार, नांगलोई,
दिल्ली—११००४१
चलभाष— ८१७८७१०३३४

अनुक्रम

विषय

१ आर्य समाज (सम्पादकीय)

२ वेदकाल, आर्यों का निवास और इतिहास.....

३ स्वामी श्रद्धानंद (कविता)

४ हम सब आर्य थे (कविता)

५ Ravana & Ambedkar not Brahmin-Shudra

६ स्वामी श्रद्धानंद (उड़िया खंड)

७ देश—धर्म का वो अद्भुत बलिदानी

८ आत्मप्रज्ञा के अद्वितीय दिव्यात्मा स्वामी श्रद्धानंद

९ ब्रह्मांड के आठ आधार

१० उसका अपना सच (कहानी)

ईमेल — aryalekhakparishad@gmail.com
वेबसाइट — https://aryalekhakparishad.com/
फेसबुक — आर्य लेखक परिषद्

Digital

आर्य समाज

इस देश के बंटवारे और पाकिस्तान बनने के कारण साम्प्रदायिक सद्भाव उखड़ गया और राजनीति दो भागों में विभक्त हो गई, एक कांग्रेस के रूप में, दूसरी हिन्दू महासभा, आर.एस.एस और बाद में जनसंघ के रूप में। आर्य समाजियों के लिए दोनों ओर मुश्किल थी फिर भी कांग्रेस उनके कुछ अधिक समीप थी। हिन्दूवादी लोग अपने साथ वह सब कुछ समेटे हुए थे जिसे स्वामी दयानन्द पाखण्ड, रूढ़ि और कुरीति कहते थे और पतन का कारण मानते थे। अतः कांग्रेस के साथ रहकर कार्य करने में आर्यों को कोई सैद्धांतिक नुकसान नहीं था। यही कारण रहा कि आर्य समाज के अधिकांश पुराने नेता कांग्रेस पार्टी के भी सदस्य रहे। इसके अतिरिक्त निम्न कही जाने वाली जातियों के आर्यजनों को कांग्रेस ही लाभदायक और निज हितों के समीप लगी।

कुछ समय पश्चात् आर्यसमाज की सम्पत्ति पर हिन्दूवादी लोगों की नजर गई और उन्होंने उसे हथियाने की योजना बनाई। इन लोगों ने सर्वप्रथम आर्यसमाज की सदस्यता ग्रहण की और येन–केन प्रकारेण बहुमत बना कर फूट डालने और झगड़े करवाने प्रारम्भ किए। जिन आर्य समाजों में इनका वर्चस्व स्थापित हो गया वहां से आर्यसमाज का कार्य ठप कर दिया गया, केवल विवाह कराने का धन्धा चलाया गया। इस प्रकार आर्य समाज और उसकी शिक्षा संस्थाओं की पर्याप्त चल अचल सम्पत्ति पर इन लोगों ने कब्जा कर लिया और उसे अपने राजनीतिक स्वार्थों को पूरा करने में प्रयुक्त करने लगे। एक समय ऐसा आया जब सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान और मन्त्री पदों पर इनका कब्जा हो गया और दोनों ने मिलकर आर्य समाज रूपी भवन की ईंट से ईंट बजा डाली और बुनियाद उखाड़ डाली। आज यही लोग योजनाबद्ध ढंग से स्वामी दयानन्द और आर्यसमाज को तिरोहित करने और उसके मुख्य कार्य को ठप करने में लगे हैं। वर्तमान में आर्य समाज के अस्तित्व को सबसे अधिक खतरा इन्हीं हिन्दू वादियों से ही है। इनमें से किसी की भी नीयत आर्यसमाज और दयानन्द का कार्य करने की नहीं है। इनकी रुचि सिर्फ एम.एल.ए और एम.पी या अन्य छोटे बड़े राजनीतिक पद प्राप्त करने और विवाह व्यवसाय चलाने में ही है। आर्यसमाजों में दिया लेकर ढूंढ़ने पर भी सचमुच का आर्यसमाजी मिलना कठिन है। ये लोग वास्तविक आर्यसमाजियों को निरुत्साहित करते रहते हैं, उन्हें आगे नहीं आने देते। आर्य समाजों में जोड़ तोड़ करके मन्त्री प्रधान बन जाते हैं, इसके लिए लड़ाई–झगड़ा और मुकदमे बाजी करते हैं, नवयुवकों और दलितों को आर्य समाज का सदस्य ही नहीं बनने देते।

वर्तमान में आर्य समाज की स्थिति–जैसा कि हमने पूर्व में स्पष्ट किया है कि वर्तमान में आर्य समाज में समाज का कोई भी लक्षण विद्यमान नहीं है। वह एक सहकारी संस्था सा है। उसमें मूर्तिपूजा करने वाले, मांस–मदिरा अंडे खाने वाले, तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेट खाने–पीने वाले, मृतक–श्राद्ध, मृत्यु–भोज करने वाले, गंगा में हड्डी डालने वाले, काले सफेद का धन्धा करने वाले, समाज की सम्पत्ति हड़पने वाले, चरित्रहीन और झूठे लोग सदस्य ही नहीं, मन्त्री प्रधान बने नंगी आंखों से देखे जा सकते हैं।

आर्य समाज में एक कर्मकाण्ड नहीं रहा। हर समाज में अलग अलग तरीके से हवन होता है। हर पुरोहित का अपना अलग तौर तरीका और अंदाज है। कई तरह की लोकाचार पद्धतियों और पाखण्डपूर्ण क्रियाओं का सृजन करके अपनी–अपनी पुस्तकें छाप रखी हैं। कुछ लोग सर्वथा अशास्त्रीय बहुकुण्डी यज्ञों का व्यवसाय करते हैं। पण्डागीरी का भरपूर बोलबाला है। वर्तमान में आर्य समाज में कोई अनुशासन नहीं है। कोई पात्रता या योग्यता की परख की व्यवस्था नहीं है। जिसका जी चाहे संन्यासी बन जाय, जिसका जी चाहे उपदेशक प्रचारक या पुरोहित बन जाय।

आजकल आर्य समाज में योग के नाम पर भी बहुत बड़ा पाखण्ड पनप रहा है जो लोग पतंजलि के योग सिद्धांत और क्रियात्मक स्वरूप को रंचमात्र नहीं समझते, यम नियम का पालन नहीं करते, वे लोग

योगाचार्य और सिद्ध पुरुष मान लिए गए हैं। ऐसे सूदखोरी (ब्याज) का धन्धा करने वाले संन्यासी हैं। चेलों पर चरित्रहीनता के आरोप लग रहे हैं। इस कारण नैष्ठिक ब्रह्मचर्य धारण करने वालों को सन्देह की दृष्टि से देखा जाने लगा है और आर्य समाज का अपयश हो रहा है।

अब आर्यसमाज का कोई सर्वमान्य नेता नहीं रहा आर्य जनता द्वारा योग्यता और सक्रियता के आधार पर नेता नही चुना जाता, जोड़ तोड़, लड़ाई–झगड़ा के द्वारा नेता पद जबरन हथियाया जाता है। अतः अब आर्य समाज सत्संग और स्वाध्याय के केन्द्र न रहकर झगड़ा फसाद के केन्द्र बन गए हैं। वहां बैठे हुए गैर आर्य समाजी विचारों वाले मन्त्री प्रधानों के साथ आर्य समाज के सच्चे सदस्य कैसे काम कर सकते हैं ? सो बहुत से लोग आर्य समाज जाना ही छोड़ चुके हैं।

आर्यसमाज में पुरोहित और संन्यासी के पद भी लांछित हो रहे हैं। पुरोहित तो मन्त्री प्रधानों के खुशामदी नौकर से ही हो गए हैं, न कि मार्गदर्शक या परामर्शदाता। मैंने इन्हें धन के लोभ में सिद्धांत विरुद्ध सब पाखण्ड करते देखा है। संन्यासियों में या तो चिकनी पगड़ी वाले चमकते गेरुए वस्त्रों में सजे सफल–असफल राजनीतिबाज मिलेंगे या फिर वेद और संस्कृतज्ञान शून्य भोजन भट्ट। वेदविद् विरक्त भिक्षाभोजी, निष्पक्ष, निस्पृह यतियों का लगभग अभाव ही है।

उपदेशकों में अधिकांश तोता मैना और अकबर बीरबल के किस्से व चुटकुले सुनाकर मनोरंजन करने वाले या जोकरी करने वाले भजनोपदेशक रह गए है। विद्वानों के तो दर्शन ही दुर्लभ हैं। यद्यपि विद्वानों की कोई कमी नहीं है पर वे या तो आर्यसमाज से अलग कहीं अन्यत्र कार्यरत हैं, या फिर स्वतन्त्र व्यवसायी।

आर्यसमाज के शिक्षा संस्थानों का भी बुरा हाल है। वहां न तो आर्यसमाज के अनुरूप चरित्र मिलता है न ही व्यवहार। ये आर्यसमाज के उद्देश्य को कथमपि पूरा नहीं करते।

आर्यसमाज को सबसे अधिक हानि प्रतिनिधि सभाओं के द्वारा हुई है। इन सभाओं ने आर्यसमाज के लिए करणीय कुछ भी नहीं किया। हर रविवार को संगठन सूक्त का पाठ करने वाली इन सभाओं के अनेक लोग करोड़ों की सम्पदा के स्वामी बन गए है, दो–दो,तीन–तीन टुकड़े हो रहे हैं। इसका कारण यह है कि जो भी नेता आए वे अधिकांश में राजनीतिक लाभ लेने की नीयत से ही आए। इस लिए इन्होंने कभी आर्यसमाज का कार्यक्रम नहीं अपनाया। मात्र राजनीतिक और आर्थिक लाभ देने वाले सम्मेलनों में सबको उलझाए रखा और धन बटोरकर निजी हित सिद्ध करते रहे, सम्मेलन करना वस्तुतः इनका धन्धा है। दरअसल सभाओं ने गुटबाजी और ईर्ष्या–द्वेष बढ़ाने का ही कार्य किया है। सभाओं की न कोई कार्ययोजना होती है और न बजट। इन नेताओं ने दो बड़े अपराध किए हैं, जिसके कारण आर्यसमाज की कमर ही टूट गई।

एक तो आय का शतांश देने के नियम में संशोधन किया और एक सामान्य सी राशि देने का संशोधन कर दिया। दूसरा एक प्रस्ताव यह पास किया कि आर्यसमाज का सदस्य किसी भी राजनीतिक पार्टी का सदस्य बन सकता है।

जिन लोगों ने ये दो संशोधन किए वही आर्यसमाज के हत्यारे हैं। अब यदि कोई आर्य समाज की अवनति का कारण पूछे तो कहना होगा कि –

काफिले गुजरें वहां से, क्योंकर सलामत वाइज।
हो जहां पर रहनुमा और रहजन एक ही शख्स।।

– वेदप्रिय शास्त्री

क्रमशः

जन्म – जिसमे किसी शरीर के साथ संयुक्त होके जीव कर्म में समर्थ होता है ; उसको **जन्म** कहते हैं।

मरण – जिस शरीर को प्राप्त होकर जीव क्रिया करता है, उस शरीर और जीव का किसी काल में जो वियोग हो जाना है उसको **मरण** कहते हैं।

– महर्षि दयानन्द सरस्वती

वेदकाल, आर्यों का निवास और इतिहास लेखन का आधार : एक विश्लेषण

– अखिलेश आर्येन्दु

वेदकाल और आर्यों की उत्पत्ति को लेकर कुछ तथ्यात्मक और तर्क–आधारित बातें हमने पिछले अंकों में प्रमाण के आधार पर लिखने की कोशिश की। विदेशी और वामपंथी लेखकों ने किस दृष्टि के साथ भारतीय इतिहास लिखा और उनमें किन विदेशी विद्वानों, भाषाविदों और इतिहासकारों का योगदान था, इसे भी बताने की कोशिश की। मेकाले के षड्यन्त्रों को सफल बनाने में किन–किन क्षेत्रों का किन–किन लोगों का योगदान था, इसे भी खोजने का गहराई से प्रयास किया। इससे पता चला कि मेकाले ने भारत को गुलाम बनाने और भारतीय जनमानस में वेदादि ग्रंथों में विश्वास के प्रति घृणा पैदा करने लिए साम–दाम–दण्ड–भेद सभी का प्रयोग किया था। जिसमें वह पूर्णतः सफल रहा। सबसे बड़ी सफलता उसकी वेद को बाईबिल से कमतर सिद्ध करने की थी। जिस वेद को वैदिक धर्मीजन और विद्वान् परमात्मा की वाणी और सृष्टि के साथ चार ऋषियों के माध्यम से प्रकट करने वाला मानते आ रहे थे उस वेद को मेकाले के सहयोगी, अनुचर और विश्वासी अधिकतम 6 हजार वर्ष का साबित करने में लगे रहे। इन विदेशियों ने अपने तर्क, तथ्य और कल्पना को इस तरह मूर्तरूप दिए जो सामान्य व्यक्ति को कुछ हद तक सही मानने के लिए विवश करता है। यही कारण है इतिहास में वेदकाल निर्णय और आर्यों की उत्पत्ति सहित, आर्यों के निवास स्थान के सम्बन्ध में जो कल्पना और तथाकथित प्रमाण जुटाए वे इतिहास के आधार को ही खण्डित करने वाले थे। लेकिन भारत का कोई भी बड़ा इतिहासकार या भाषाविद् (इतिहासज्ञ) उनकी कल्पना, षड्यन्त, शरारत और झूठ को सार्वजनिक करने की सामान्य कोशिश भी नहीं की, बल्कि उसे परम प्रमाण मानकर आँख मूंदकर समर्थन ही किया। इसका परिणाम यह हुआ कि अंग्रेजों ने भारत के धर्म, अध्यात्म, समाज, शिक्षा, संस्कृति, वैदिक वांगमय, राजनीति, इतिहास और साहित्य के सम्बन्ध में जो भी कहा, लिखा और बताया उसको 'बाबा वाक्यम् प्रमाणम्' मानकर स्वीकार कर लिया गया। मेकाले के देशी–विदेशी मानस पुत्रों ने मेकाले के प्रत्येक स्वर–व्यंजन तक को हूबहू अपना लिया। जिसका परिणाम यह हुआ कि विश्व की दृष्टि में भारत गड़ेरियों और गंवारों का देश बनकर रह गया। इस अंक में हम वेदकाल निर्णय, आर्यों की उत्पत्ति और विदेशी इतिहास लेखन की समीक्षा करेंगे। लेख कैसा लगा, इसे पाठकगण बताएं जिससे आप की प्रतिक्रिया का पता चल सके।

– सम्पादक

देशी–विदेशी विद्वानों के मत –

वेद काल निर्धारण के सम्बन्ध में विदेशी इतिहासकारों, विद्वानों और पादरियों ने अनेक तरह की शरारतपूर्ण कल्पनाएं कीं। उन कल्पनाओं को प्रमाण के रूप में प्रस्तुत करने के लिए अनेक तरह की मनगढ़न्त बातें लिखी गईं। पिछले अंक में हमने देखा कि मैक्समूलर ने मेकाले के भारत विरोधी षडयंत्र करने और शरारत, कल्पना और षडयंत्र रचने के लिए किस–किस तरह के हथकंडे अपनाए। इसी तरह वेद काल निर्धारण के सम्बन्ध में जो विचार मैक्समूलर, मैकडोलन सहित अनेक विदेशी विद्वानों ने जिस तरह की कल्पनाएं कीं उसमें उन्हें काफी हद तक सफलता मिली। उन्होंने इसके लिए सायण के वेद भाष्य का सहारा लिया। भारत के उच्च शिक्षा संस्थानों में पढ़ाए जाने वाले इतिहास से कोई भी सामान्य बुद्धि का व्यक्ति यह नहीं कह सकता कि वेदों का उद्भव एक सामान्य घटना है और धरती पर इनकी उपस्थिति 6000 वर्ष से पहले की नहीं है। दरअसल, आज तक विश्व के अवैदिक धारा के इतिहासकार वेद काल, आर्यों की उत्पत्ति, उनके निवास के सम्बन्ध में कोई प्रमाणाणिक तथ्य या प्रमाण प्रस्तुत नहीं कर पाए। इसके बावजूद भारत में जाति–व्यवस्था को पोषण देने वाले और मैक्सूलर के भारतीय इतिहास के सम्बन्ध में की गई शरारत को ही इतिहास का प्रमाण मानकर स्वयं को भारत का मूल निवासी और जातिगत ब्राह्मण, क्ष्त्रिय और वैश्य को आर्य की सन्तान साबित

करते हुए बाहर से आया हुआ साबित करने का कुत्सित प्रयास करने की चेष्ठाएं करते रहे। स्वयं को भारत का मूल निवासी सिद्ध करने के लिए भारत में जाति के आधार पर बने संगठन बामसेफ ने समाज में प्रचलित बे सिर–पैर की बातों को लेकर जनता को विशेष कर दलितों और पिछड़ों को बरगलाने के लिए अनेक निन्दनीय प्रयास किए हैं। इसमें लेख लिखना, मूल निवासी कौन? विषय पर गोष्ठियों का आयोजन करना, सोशल मीडिया पर यू–ट्यूब के माध्यम से प्रचारित करना और संसद में कांग्रेस और बहुजन समाज पार्टी के सांसदों के माध्यम से शोर–गुल मचाना सम्मिलित है। बाल गंगाधर तिलक, डिसकवरी ऑफ इंडिया, पं जवाहरलाल, वोल्गा टू गंगा, विनायक सावरकर, इकबाल ने लिखा है आर्य बाहर से आए, महात्मा गांधी, सुभाष चन्द्र सेन, प्राचीन भारतीय इतिहास, गुलामगिरी में महात्मा ज्योतिबा फूले, अमेरिका के साल्ट युनिर्वसिटी के माइकल नामक व्यक्ति के तथाकथित शोध का उद्धरण देकर यह सिद्ध करने का असफल प्रयास किया गया है कि आर्य विदेशी थे और दलित और अल्पसंख्यक भारत के मूल निवासी हैं। बामसेफ जिन तथाकथित प्रमाणों के बूते दलितों और अल्पसंख्यकों को भारत का मूल निवासी सिद्ध करने की बात करता रहा है, वे कथित प्रमाण अंग्रेजों के समय से दिए जा रहे हैं। बामसेफ ने किसी भी कथित प्रमाण को लेकर अपनी कोई बुद्धि नहीं लगाई है। अंग्रेज और वामपंथी इतिहासकार या विद्वानों ने जो कह दिए उसे ही प्रमाण मान लिया। मूल निवासी और आक्रमणकारी आर्य विषय पर मैं पहले भी लिख चुका हूं। सबसे पहले वेदकाल पर चर्चा कर लेते हैं।

वेदकाल : तर्क और प्रमाण

मेकाले की देखरेख में मैक्समूलर ने वेदकाल, आर्यों की उत्पत्ति, उनके निवास, सभ्यता, संस्कृति, कला, समाज, धर्म और अध्यात्म जैसे अनेक विषयों पर नज़र दौड़ाई। प्रत्येक विषय को इस तरह से प्रस्तुत किया जैसे वह प्रमाण की श्रेणी में सबसे अधिक मान्य है। इसके अतिरिक्त भारत के कुछ नामचीन व्यक्तियों ने भी वेदकाल को लेकर अपने विचार व्यक्त किए। जिसमें बाल गंगाधर तिलक, मदन मोहन मालवीय, जवाहर लाल नेहरू, शंकर बालकृष्ण दीक्षित, डॉ.सम्पूर्णानन्द, अविनाशचन्द्र दास, देवेन्द्रनाथ मुखोपध्याय प्रमुख हैं।

विदेशी विद्वानों के अनुसार वेदकाल की मान्यताएं

1–मैक्समूलर	1200 से 1500 वर्ष ईसापूर्व
2–मैकडानल	1200 से 2000 वर्ष ईसापूर्व
3–कीथ	1200 वर्ष ईसापूर्व
4–बूल्हर	1500 ईसापूर्व
5–हॉग	2000 वर्ष ईसापूर्व
6–हिव्टनी	2000 वर्ष ईसापूर्व
7–विल्सन	2000 वर्ष ईसापूर्व
8–ग्रिफिथ	2000 वर्ष ईसापूर्व
9–थ्योडोर	2000 वर्ष ईसापूर्व
10–विण्टरनिट्ज	2500 वर्ष ईसापूर्व
11–जैकोबी	3000 से 4000 वर्ष ईसापूर्व

भारतीय विद्वानों की दृष्टि में वेदकाल

1–शंकरबालकृष्णदीक्षित	3000 ईसापूर्व
2–लोकमान्यतिलक	6000 से 10000 वर्ष ईसापूर्व
3–डॉ.सम्पूर्णानन्द	18000 से 30000 वर्ष ईसापूर्व
4–अविनाशचन्ददास	25000 से 50000 वर्ष ईसापूर्व
5–देवेन्द्रनाथमुखोपाध्याय.	25000 से 50000 वर्ष ईसापूर्व

वेदकाल निर्धारित करने वाले देशी–विदेशी विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है। वेद की उत्पत्ति के सम्बन्ध में सबसे अधिक समय देवेन्द्रनाथ मुखोपध्याय देते हैं। सब की अपनी दृष्टि और तर्क हैं। लेकिन महज दो हजार या पांच हजार वर्ष पूर्व का होने की बात हास्यास्पद लगती है। इसका अर्थ यह हुआ महावीर स्वामी और गौतम बुद्ध के बाद वेदों का उद्भव हुआ। 2000 वर्ष निर्धारित करते समय विदेशी विद्वानों ने इतनी भी अक्ल नहीं लगाई कि वेदों की भाषा न तो साधारण संस्कृत है और न तो कोई मिली–जुली भाषा है। किस आधार पर 2000 वर्ष का उन्होंने निर्धारण किया? मुझे लगता है, विदेशी विद्वान् वेदों की अखंड, कालजयी और अमृतमय ज्ञान–धारा का प्रतिनिधित्व करने के कारण वे द्वेष और ईर्ष्या से भर गए कि उनसे वेदों का सृष्टिकाल का और ईश्वर–कृत होने के विचार से ही अन्दर ही अन्दर घृणा हो गई थी। वे निष्पक्ष, उदारवादी और पवित्रता जैसे गुणों से भी रहित हो चुके थे। वरना क्या कारण है कि वेद अर्थात् ज्ञान की पुरातनता की स्वीकृतता के प्रति इतनी विकट घृणा? क्या यह बुद्धि और सत्य को ताक पर रखकर अपनी–अपनी जबरन बड़बड़ाने और थोपने जैसी बात नहीं है?

वेदकाल के समय निर्धारण के पीछे सब के अपने तर्क और दृष्टिकोण हैं। लेकिन इन तर्कों और दृष्टिकोणों को लेकर भी अनेक प्रतिप्रश्न किए जाते रहे हैं, जिनका समाधान अब शायद नहीं है। उदाहरण के तौर पर मैक्समूलर और मैकडानल ने जैकोबी द्वारा कि गए वेदों के समय निर्धारण 4000 ईसापूर्व को इस तरह खण्डन करते हैं जैसे जैकोबी ने बहुत बड़ा झूठ बोला हो और मैक्समूलर उसका खण्डन करने के लिए आगे आए हैं। इसको समझने की जरूरत है। जैकोबी का मानना है वेद में ऐसे स्थल हैं जिनका निर्माण 4500 ईसापूर्व में ही हो सकता है। प्रमाण के रूप में उन्होंने ऋग्वेद के मण्डूक सूक्त की ऋचा का उल्लेख किया, जो इस प्रकार है– **देवहितिं जुगुपुर्द्वादशस्य ऋतुं नरो न प्र मिनन्त्येते। संवत्सरे प्रावृष्यागतायां तप्ता धर्मा अश्नुवते विसर्गतम्।।(ऋ.7/103/09)** इस ऋचा में 'संवत्सरे प्रावृषि आगतायाम्' अर्थात् संवत्सर की गणना में वर्षा ऋतु के आने पर –'जुगुपुः द्वादशस्य ऋतुम्'–संवत्सर के जो बारह महीने होते हैं, उनके क्रम में वर्षा ऋतु के प्रथम स्थान की लोग रक्षा करते हैं। जैकोबी का कहना है कि इसका अभिप्राय यह हुआ कि ऋग्वेद के समय ऋतुओं की ऐसी स्थिति थी जिसमें वर्ष गणना में वर्षा ऋतु का स्थान है। ऐसे अनेक विद्वान् है जो मानते हैं कि वर्षा ऋतु में प्रथम स्थान होने के कारण सन् को वर्ष कहा जाता है। अनेक विद्वान कहते हैं–ऋतुओं में वर्षा–ऋतु का प्रथम स्थान होने के कारण 'वर्ष' को 'सन्' कहा जाता है। जैकोबी का मानना है कि ऋतु का प्रथम स्थान ईसा पूर्व 4500 में ही सम्भव हो सकता। लेकिन जैकोबी के इस तर्क का मैकडानल ने खण्डन करते हुए कहा– ''इस बात में सन्देह है कि भारत के ऋषि–मुनि ज्योतिषशास्त्र के इतने ज्ञाता थे कि नक्षत्रों की स्थिति की इतनी गहराई तक पहुँच सकते जितनी गहराई तक जाकर जैकोबी के मत की पुष्टि हो सकती है।'' मैकडानल का यह आक्षेप ऐसा ही है कि कोई कहे कि भारतीय वैज्ञानिकों ने अपने दम पर नक्षत्र–गणों की खोज को साकार रूप देते हुए जो हाल में नक्षत्र–खोजी विमान भेजा है, वह अविश्वासनीय है, क्योंकि यह अत्यन्त जटिल कार्य है जो भारतीय वैज्ञानिक कर ही नहीं सकते। मैकडानल ने जैकोबी की आलोचना करते समय न तो आलोचना के पीछे के किसी ठोस कारण का उल्लेख किया और न तो कोई ऐसा बुद्धिसम्मत प्रमाण ही दिया, जो विचारणीय हो। मैकडानल जैकोबी की आलोचना करते हुए यह भूल गए कि आर्यभट्ट (5वीं शताब्दी) व भास्कराचार्य (7वीं शताब्दी) आदि ग्रंथों में वर्णित ज्योतिषविद्या का अत्यन्त सूक्ष्म वर्णन किया गया है। जो वैज्ञानिक होने के साथ–साथ व्यावहारिक भी है। उक्त दोनों मनीषी खगोल और ज्योतिषविद्या के निष्णात विद्वान् थे और अनेक ज्योतिषशास्त्रियों के सम्बन्ध में विस्तार से वर्णन किया है। वृहदारण्यकोपनिषद् (7/1) में नारद ने सनत्कुमार को प्राप्त अपनी विद्या का जो परिचय दिया था, उसमें उसने उन सभी विद्याओं का परिगणन किया था जो उस काल में सर्वसाधारण को पढ़ाई जाती थीं। इसी में नारद ने कहा है कि उसने चारों वेदों के साथ नक्षत्रविद्या का भी अध्ययन किया है। मैकडानल ने संस्कृत के ग्रंथों के साथ ही साथ वेदों का भी स्वाध्याय कितना किया था, कहना मुश्किल है। समझदार व्यक्ति या विद्वान् वह होता है जो किसी बात को कहने के पहले गहराई से जान–समझकर ही बोलता है या टीका–टिप्पणी करता है।

तिलक के अनुसार वेदकाल

भारतीय मनीषी बाल गंगाधर तिलक द्वारा वेदकाल का निर्धारण सामान्य सोच वाले व्यक्ति के लिए ठीक लग सकता है, लेकिन विचारवान् व्यक्ति के लिए गवेषणा का विषय है। आइए, विचार करते हैं। तिलक महोदय कहते हैं–आर्य सभ्यता का पहला युग पूर्व मृगशीर्ष का अदितियुग है। यह युग 6000 से 4000 ईसापूर्व का है। तिलक के अनुसार अदितियुग में परिष्कृत वैदिक सूक्त नहीं थे। दूसरा युग मार्गशीर्ष युग है। जो 4000 से 2500 ईसापूर्व था। वेद के अनेक सूक्त इस युग में गाए गए। तीसरा युग कृतिकायुग था। इसका आरम्भ 2500 ईसापूर्व में हुआ और यह 1500 ईसापूर्व तक रहा। लोकमान्य तिलक ने ऋग्वेद का काल ईसवी सन् से लगभग 7000 वर्ष पूर्व माना है। ये सारा वर्णन तिलक ने अपनी पुस्तक 'ओरायन' में किया है। अपनी युक्ति को सही साबित करने के लिए उन्होंने गीता का यह श्लोक उद्धृत किया है–

मासानां मार्गशीर्षोऽहं ऋतूनां कुसुमाकरः।।

(गीता 10/25)

इस श्लोक में श्रीकृष्ण कहते हैं–महीनों में मैं मार्गशीर्ष हूँ और ऋतुओं में वसन्त हूँ। गीता के इस विशेष

वक्तव्य को तिलक महोदय ने वेदकाल से जोड़ने का प्रयास किया है। वे कहते हैं–ऋतुओं में वसन्त कहना तो समझ में आता है, किन्तु 'मासों में मैं मार्गशीर्ष हूँ' इस कथन का सामन्जस्य कैसे किया जाए? गीता से मिलता–जुलता यह वाक्य रामायण, महाभारत और भागवत में भी वर्णित है। तिलक कहते हैं– उक्त ग्रंथों को छोड़िए, ऋग्वेद में भी इसका जिक्र आया है। अपने ग्रंथ 'ओरायन' में वे कहते हैं– ऐसा लगता है उस समय मृगशिरा नक्षत्र का विशेष महत्व था। अपनी बात को प्रमाणित करते हुए वे कहते हैं– मृगशिरा नक्षत्र का विशेष महत्व यह बताता है कि वसन्त–सम्पात तथा शिशिर–सम्पात मृगशिरा नक्षत्र में पड़ते थे। अब हम यह जान लेते हैं कि वसन्त–सम्पात तथा शिशिर–सम्पात का मतलब क्या है? ये दोनों सम्पात उस समय होते हैं जब दिन–रात बराबर होते हैं। ऐसा वर्ष में दो बार होता है। ग्रीष्म ऋतु के प्रारम्भ में 21 मार्च और शीत ऋतु में 23 सितम्बर। 21 मार्च को दिन बढ़ने लगते हैं और रातें छोटी होने लगती हैं और 23 सितम्बर को दिन छोटे होने लगते हैं और रातें बड़ी होने लगती हैं। मार्च वाले सम्पात को वसन्त–सम्पात कहते हैं और सितम्बर वाले सम्पात को शिशिर–सम्पात कहते हैं। इन सम्पातों का सम्बन्ध वर्ष भर के नक्षत्रों से है। ज्योतिषशास्त्र में 27 नक्षत्र माने जाते हैं। वे है –अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्र, पूनर्वस, पुष्य, अश्लेषा, मघा, पूर्वा, उत्तरा, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तरषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभादपद्र, उत्तराभाद्रपद तथा रेवती। इन नक्षत्रों से तिलक महोदय किस तरह वेदकाल का निर्णय करते हैं, आइए देखते हैं। तिलक कहते हैं–ईसवी सन् के काल में वसन्त–सम्पात और शिशिर–सम्पात उत्तराभाद्रपद में होते आ रहे हैं, जबकि वेदकाल में ये सम्पात मृगशिरा नक्षत्र में होते थे। स्वष्ट है मृगशिरा को महत्व तिलक के अनुसार इसी कारण अधिक देने की परम्परा है। वसन्त–सम्पात को एक नक्षत्र से दूसरे नक्षत्र में जाने में 960 या 1000 वर्ष का लगता है। इससे यदि गणना की जाए तो पृथ्वी या सूर्य मृगशिरा नक्षत्र में थे, यह ईसवी सन् से 6000(960*6) वर्ष पहले का था। ईसवी सन् में वसन्त तथा शिशिर सम्पात उत्तराभाद्रपद में रहे हैं। यही कारण है ऋग्वेद का समय ईसा से लगभग 6000 वर्ष पूर्व का ठहरता है। अब देखना यह है कि तिलक महोदय की यह गणना कितनी गणितीय, वैज्ञानिक और तर्कसंगत ठहरती है। वेद के मंत्र को आधार बनाकर जो गणित तिलक प्रस्तुत करते हैं वह क्या वाकई में प्रमाणित होता है?

पहली बात यह है कि वेद में इतिहास का कोई दूर–दूर तक वर्णन नहीं है। फिर वेद से वेदकाल का निश्चय करना कहाँ तक ठीक है? यह बात भी समझने की है कि वेद से ही संसार की दूसरी भाषाओं में शब्द गए हैं, वे भले ही दूसरे अर्थ में हों। तिलक महोदय वेद से दो–चार शब्द लेकर पूरा वेदकाल का निश्चय करना चाहते हैं। तिलक अपने ग्रंथ 'ओरायन' में लिखते हैं– ऋग्वेद के 10वें मण्डल के 86वें सूक्त में वसन्त–सम्पात के मृगशिरा नक्षत्र में होने का वर्णन है। मृगशीर्ष नक्षत्र वर्तमान उत्तरभाद्रपदा से 6 नक्षत्र पहले हैं। वसन्त–सम्पात के मृगशीर्ष नक्षत्र में जाने में 960 वर्ष लगते हैं। इस हिसाब से वेद का रचनाकाल 960× 6) = 5760 अर्थात् आज से लगभग 8000 वर्ष रहा होगा। सामान्यतः यह तर्क ठीक लगता है, लेकिन थोड़ी–सी गहराई से विचार करने में इसका थोथापन दिखलाई देने लगता है। इसका थोथापन कैसे है, आइए जानते हैं।

तिलक महोदय जिस गणित से वेदकाल निर्धारित करते हैं, आइए उसे ध्यान से समझें। तिलक कहते हैं–एक वर्ष में कुल 27 नक्षत्र होते हैं। अब हम (960*27)=25960 अर्थात् इतने वर्ष बाद पुनः वसन्त–सम्पात क्रान्तिवृत पर पुनः घूमकर आ जाता है। इससे कहाँ सिद्ध होता है कि वेदकाल 8000 वर्ष पूर्व रहा होगा। यदि हम ध्यान से समझने का प्रयास करें तो पाएंगे कि ईसा से लगभग 6000 वर्ष पूर्व वसन्त–सम्पात मृगशीर्ष नक्षत्र में था तो उससे लगभग 26000 वर्ष पूर्व अर्थात् 32000 वर्ष पूर्व भी उसी नक्षत्र में था। उससे भी पहले हर 26000 वर्ष पूर्व वसन्त–सम्पात मृगशीर्ष नक्षत्र में आता रहा। सृष्टि के लगभग दो अरब वर्ष के स्थितिकाल में कितनी ही बार यह स्थिति आई होगी। इसे सामान्य उदाहरण द्वारा इस प्रकार समझा जा सकता है। सोमवार हर सात दिन के बाद फिर आ जाता है। तब सोमवार कहने मात्र से क्या एक सप्ताह पूर्व का सोमवार ही समझा जाएगा? एक महीने, एक साल या सौ साल पूर्व का सोमवार क्यों न समझा जाए? यदि तिलक महोदय के तर्क को मान लिया जाए

तो आज से 20000 वर्ष बाद (2600–6000) पैदा होने वाला विद्वान् इस तर्क के आधार पर कहेगा कि वेदों की रचना मात्र 500 वर्ष पूर्व हुई। केवल कल्पना और कुछ शब्दों के आधार पर वेद के सृजन का समय निश्चित करना वेद जैसे अमर ग्रंथ के साथ ही अन्याय नहीं है बल्कि जनमानस को भी गुमराह करने जैसी बात है। तिलक महोदय यदि विषय को समझते तो उन्हें वेद के समय के सम्बन्ध में सूत्र–ग्रंथों में प्रमाण के साथ मिल जाता, लेकिन उन्होंने वेद में इतिहास खोजने का वही कार्य किया जो विदेशी मैक्समूलर जैसे अनेक विद्वान् करते आ रहे थे। इस अंक में बस इतना ही। अगले अंक में इसी विषय पर चर्चा करूंगा।

****

स्वामी श्रद्धानंद

कूट-कूट कर भरी हुई थी
त्याग, तपस्या की शुचि खान
प्राण देश-हित किए न्यौछावर
आर्य जनों की बन पहचान।

जग में शुद्धि-चक्र चलाया
देश-विदेश उपदेश किया
कीर्ति-किरण फैलायी जग में
गुरुकुल का विस्तार किया।

अभय दयानंद के अनुयायी
क्रांतिकारी बलिदानी वीर
स्वामी श्रद्धानंद बिना है
आर्य जगत् के उर में पीर।

धृतिवर श्रद्धानंद स्वामी ने
सीने पे गोली खायी
देकर निज बलिदान सुयश की
धवल पताका फहरायी

बहुत याद आते आर्यों को
स्वामी श्रद्धानंद महराज
देता हूं **बलिदान दिवस** पर
अमित **स्वीय श्रद्धांजलि आज**।

डा. सुशील कुमार त्यागी-अमित

हम सब आर्य थे

सृष्टि की आदि में हम सब आर्य थे,
हम सब आर्य थे, आज भी हैं और सदा ही रहेंगे।।

हिन्दू मत हमको कहिए, यह हिन्दुस्तान नहीं हैं,
काले, काफिर, चोरों की, हम तो सन्तान नहीं हैं।
आर्यावर्तवासी हम सब, बोलो कब अनार्य थे,
हम सब आर्य थे, आज भी,....१

इस पृथ्वी माता का, बृहद् परिवार हमीं से है,
विज्ञान विश्व बल वैभव भण्डार हमीं से है।
विश्वगुरु कहाते थे हम, करते सुकार्य थे,
हम सब आर्य थे, आजभी,...२

हम से ही पढ़ने वाले,अब हमको ज्ञान सिखाते,
आए थे आर्य बाहर से, ऐसा इतिहास बताते।
यहां राज्य करने को, ये धूर्तों के कुकार्य थे,
हम सब आर्य थे, आज भी....३

हम आदिकाल से ही हैं, इसके ही मूलनिवासी,
है आर्य नाम हम सबका, जितने भी भारतवासी।
धर्म सदाचार न्यायपूर्ण अपने कार्य थे,
हम सब आर्य थे, आज भी....४

अब उठो "वेदप्रिय" वीरो, मिल करके कदम बढ़ाओ,
जग के कोने-कोने में, फिर ओम् ध्वजा लहराओ
चाहते यही तो स्वामी दयानन्दाचार्य थे,
हम सब आर्य थे, आज भी....५

– वेदप्रिय शास्त्री
सीताबाड़ी, केलवाड़ा

RAVANA & AMBEDKAR NOT BRAHMIN-SHUDRA

– Dr. Roop Chandra 'Deepak'
Lucknow (U.P.)
Mob. 9839181690

Ravana was a strong but bad king of Lanka. Rama was a brave and good prince of Ayodhya. A battle was fought in which Rama killed Ravana. It is now said that in the battle a Kshatriya (Rama) killed a Brahmin (Ravana). This is not worth-saying.

Ravana was not a Brahmin. His father Vishravaa, being a Rishi or Muni, was certainly a Brahmin. But Brahmin is a man of spiritual and scriptural knowledge. Ravana was not a spiritual person. He was not a teacher of Vedas. He was a man of warfare and by office a king. So, he was a Kshatriya like Rama. A Brahmin's son is not necessarily a Brahmin, according to the definition of the term, and hence Ravana was not a Brahmin in the true sense of the term.

Dr. Bhimrao Ramji Ambedkar was not a Shudra, according to the definition of the four varnas of Indian Culture. He was born in village Ambadawe, and his surname was registered in the school as Ambadawekar. But his Brahmin teacher changed it and gave him his own surname 'Ambedkar' He is now called 'Babasaheb' meaning a 'respected father' in Marathi language.

Dr. B.R. Ambedkar had earned Doctorates in economics from both Columbia University and the London School of Economics. He was an economist, professor and lawyer. In the Indian culture the name 'Shudra' has been given to the Labour Class. A labourer, or coolie, or rickshaw-puller can be called a shudra. But Dr. Ambedkar was a man of knowledge, and his profession was also knowledge-based. So he was a Brahmin, and not a Shudra in the true sense of the term.

In Indian Government services today, there is a hierarchy of four levels- class I, II, III and IV, class I being the highest and class IV the lowest level. This hierarchy is for a smooth functioning of Government system. As today nobody has any grievance against this plurality of levels. The same thing was done in Ancient India, on the bases of ability, temperament and occupation. Nobody had any grievance against this plurality of varnas at that time, as it ensured a smooth functioning of both government and society.

Dr. S. Radhakrishnan gives an account of difference between the temperaments of the four varnas. When something happens to a person, he behaves according to his temperament. The given example is for a Shudra, a Vaishya, a Brahmin and a Kshatriya respectively. After a negative action, the four persons react one by one.

The first says, "Sir, kindly do not act so, or shall I die." The second says, "Please do not act like this sir, or shall my children die." The third says, "Take it back sir, or shall I give my life." The fourth says, "Oh you, do not do that, or shall I take your life."

The varna-system was a scientific categorisation within the organization; but anyhow its days were numbered. The highest level lowered itself, the system became hereditary, and the Tower fell down. At about the same time the religious missionaries from other religions aggravated the differences and converted the engrieved lower classes into their religions.

A group of Christian missionaries visited the eastern regions of India where the people used to worship lord Krishna through his idols. The missionaries called on the illiterate people and convinced them that Jesus is greater than Krishna. They dropped the idols of Krishna and Jesus into the river where the former drowned and the latter swam. Then they put the idols into fire where the former burnt and the latter survived. The country-people were impressed and embraced Christianity. The trick was that the showmen took Krishna's idol made of iron and wood and Jesus' of wood and iron respectively.

There is an Arya Samajist scholar in U.P. whose son was not earning enough money. The son embraced Christianity and got a good salary without any work. Another person's wife became critically ill. Both of them embraced Christianity and were allotted a handsome package in return. A poor girl was dramatically impressed by a Christian industrialist and converted to Christianity. These missionaries try to create hatred in the minds of the Fourth varna people against the upper castes and gradually convert them en bloc.

The education system in India is also to blame to a great extent. The shrewd missionaries and our fighting politicians are ruining our society by and by. The politicians strengthen the caste system during the elections, resulting into weak governments. The missionaries control the larger portion of our education system refusing the nation a substantial degree of patriotism, without which an Incredible India cannot be built.

It is agreed that during a few centuries the top three varnas have suppressed the fourth varna beyond description. But now we have a number of Think Tanks in all sections of our society. These Tanks should develop a healthy relationship between themselves so as to renew our days of Golden Times. The Varna System has a long history of successes. Let it repeat those golden successes. Let us be honest to ourselves, to our society and to our Culture ones more.

****

ଡିସେମ୍ବର ୨୩ ସହିଦ ଦିବସ ଉପଲକ୍ଷେ

କର୍ମଯୋଗୀ ସ୍ୱାମୀ ଶ୍ରଦ୍ଧାନନ୍ଦ

ପଦ୍ମନାଭ ସ୍ୱାଇଁ

ଶତଶତ ବର୍ଷର ପରାଧୀନତାର ପୀଡାରେ ଜର୍ଜରିତ ଭାରତ ବର୍ଷରେ ମହାନ୍ କ୍ରାନ୍ତିକାରୀ ରାଷ୍ଟ୍ରଭକ୍ତ ମହର୍ଷି ଦୟାନନ୍ଦଙ୍କର ଆବିର୍ଭାବ ପରେ ସମଗ୍ର ଭାରତ ବର୍ଷରେ ଏକ ନବଜାଗରଣର ସୂତ୍ରପାତ ହୋଇଥିଲା । ପରିଣାମ ସ୍ୱରୂପ ସମଗ୍ର ଦେଶର ବିଭିନ୍ନ ପ୍ରାନ୍ତରେ ଅସଂଖ୍ୟ କର୍ମଯୋଗୀ-ରାଷ୍ଟ୍ରବାଦୀ ବୀର ପୁରୁଷ ସୃଷ୍ଟି ହୋଇପାରିଥିଲେ । ମହର୍ଷିଙ୍କର ରାଷ୍ଟ୍ରବାଦୀ ଆହ୍ୱାନ୍ ଏତେ ପ୍ରଖର ତଥା ପ୍ରଭାବଶାଳୀ ଥିଲା ଯେ ଜାତି, ଧର୍ମ, ମତ, ପନ୍ଥ ନିର୍ବିଶେଷରେ ସମଗ୍ର ଭାରତ ବର୍ଷର ହଜାର ହଜାର ବୀର ପୁରୁଷ ରାଷ୍ଟ୍ରିୟ ଏକତାର ସୂତ୍ରରେ ବାନ୍ଧିହୋଇ ନିଜର ମାତୃଭୂମିକୁ ପରାଧୀନତାର ଶୃଙ୍ଖଳରୁ ମୁକ୍ତ କରିବାପାଇଁ ସଂକଳ୍ପ ବଦ୍ଧ ହୋଇଥିଲେ । ମହର୍ଷିଙ୍କର ପ୍ରେରଣାରେ ଅନେକ ରାଜା-ମହାରାଜା, ଜମିଦାର, କୃଷକ, ବ୍ରହ୍ମଚାରୀ, ଗୃହସ୍ଥୀ, ବାନପ୍ରସ୍ଥୀ ଓ ସନ୍ନ୍ୟାସୀ ସମସ୍ତ ବର୍ଗର ଲୋକ ନିଜର ମାତୃଭୂମିର ମୁକ୍ତି ପାଇଁ ଆତ୍ମୋତ୍ସର୍ଗ କରିବା ପାଇଁ ବଦ୍ଧ ପରିକର ହୋଇଯାଇଥିଲେ । କେବଳ ଏତିକି ନୁହେଁ ଚାରିତ୍ରିକ ଅଧୋପତନର ଅତଳ ଗହ୍ୱରରେ ନିମଜ୍ଜିତ ହୋଇଯାଉଥିବା ଅନେକ ପତିତ ବ୍ୟକ୍ତି ବି ମହର୍ଷିଙ୍କର ସଂସ୍ପର୍ଶରେ ଆସି ନିଜକୁ ମାନବିକତାର ଅତ୍ୟୁଚ୍ଚ ସୋପାନରେ ପହଂଚାଇବା ସହ ମାତୃଭୂମିର ସେବାରେ ନିଜକୁ ସମର୍ପି ଦେଇ ଏକ ଉଚ୍ଚ ଆଦର୍ଶ ସ୍ଥାପନ କରିଯାଇଛନ୍ତି । ଏହିଭଳି ଜଣେ ସ୍ୱେଚ୍ଛାଚାରୀ, ଉଚ୍ଛୃଙ୍ଖଳ ଜୀବନ ବିତାଉଥିବା ନାସ୍ତିକ ଯୁବକ ମହର୍ଷିଙ୍କ ପ୍ରେରଣାରେ ରାଷ୍ଟ୍ରୋଦ୍ଧାର ତଥା ଧର୍ମରକ୍ଷା କ୍ଷେତ୍ରରେ ଅବିସ୍ମରଣୀୟ କାର୍ଯ୍ୟକରି ପ୍ରଥମେ ମହାତ୍ମା ମୁନ୍‌ସିରାମ୍ ଓ ପରିଣତ ବୟସରେ ସ୍ୱାମୀ ଶ୍ରଦ୍ଧାନନ୍ଦ ରୂପେ ପରିଚିତ ହୋଇଥିଲେ । ଯାହାଙ୍କର ଜନ୍ମ ୧୮୫୬ ମସିହା ଫାଲଗୁନ କୃଷ୍ଣତ୍ରୟୋଦଶୀ ତିଥିରେ ପଞ୍ଜାବ ପ୍ରଦେଶର ଜଳନ୍ଧର ଜିଲ୍ଲାନ୍ତର୍ଗତ ତଲବନ ନାମକ ଏକ ଗ୍ରାମରେ ହୋଇଥିଲା । ତାଙ୍କର ପିଲାଦିନର ନାମ ଥିଲା ‘ମୁନ୍‌ସିରାମ’ ।

ତାଙ୍କର ପିତା ଶ୍ରୀଯୁକ୍ତ ନାନକଚନ୍ଦ ଜଣେ ଈଶ୍ୱରଭକ୍ତ, ନିର୍ଭୀକ ସ୍ପଷ୍ଟବାଦୀ ତଥା କଠୋର ସ୍ୱଭାବର ବ୍ୟକ୍ତିରୂପେ ପୋଲିସ ବିଭାଗର ଉଚ୍ଚପଦବୀରେ କାର୍ଯ୍ୟ କରୁଥିଲେ ବି ସନ୍ତାନ ମାନଙ୍କୁ ମାତ୍ରାଧିକ ସ୍ନେହ କରୁଥିଲେ । ମୁନ୍‌ସିରାମ ପିତା-ମାତାଙ୍କ ମାତ୍ରାଧିକ ସ୍ନେହ ସହିତ ପାଶ୍ଚାତ୍ୟ ଶିକ୍ଷା ଏବଂ କୁସଙ୍ଗର ପ୍ରଭାବରୁ ଜୁଆ, ମଦ୍ୟ-ମାଂସ ତଥା ଅନ୍ୟାନ୍ୟ ନିଶାଦ୍ରବ୍ୟ ସେବନ ଭଳି ଦୁର୍ବ୍ୟସନରେ ଜଡିତ ଥିଲେ । ସମାଜରେ ଧର୍ମ ନାମରେ, ଈଶ୍ୱରଙ୍କ ନାମରେ ଉଚ୍ଚ-ନୀଚ ଭେଦଭାବ, ପକ୍ଷପାତ ବିଚାର ତଥା ଧର୍ମଧ୍ୱଜଧାରୀମାନଙ୍କର ଅମାନବୀୟ ଆଚରଣରେ କ୍ଷୁବ୍ଧ ଏବଂ ଅନେକ ପ୍ରକାର ଦୁର୍ବ୍ୟସନରେ ଲିପ୍ତରହି ସ୍ୱେଚ୍ଛାଚାରୀ, ଉଚ୍ଛୃଙ୍ଖଳ ଜୀବନ ଅତିବାହିତ କରୁଥିବାବେଳେ ୧୮୭୯ ମସିହାରେ ମହର୍ଷି ଦୟାନନ୍ଦଙ୍କର ବରେଲି ସହରକୁ ଆଗମନ ହୋଇଥିଲା । ମୁନ୍‌ସିରାମ ସେଠାରେ ମହର୍ଷିଙ୍କର ଦର୍ଶନ ଏବଂ ସତ୍‌ସଙ୍ଗ ଲାଭ କରିଥିଲେ । ଦୟାନନ୍ଦଙ୍କସହ ସାକ୍ଷାତ ଏବଂ ବିଚାର ଆଲୋଚନା ଦ୍ୱାରା ମୁନ୍‌ସିରାମଙ୍କର

ବେଦ, ଧର୍ମ ଓ ଈଶ୍ୱରଙ୍କ ଅସ୍ତିତ୍ୱ ସମ୍ବନ୍ଧରେ ଯାହାସବୁ ସଂଶୟ ତଥା ଭ୍ରାନ୍ତଧାରଣ ରହିଥିଲା ତାହା ଧୀରେଧୀରେ ଦୂର ହେବାକୁ ଲାଗିଲା ଏବଂ ସେହିଠାରୁ ହିଁ ତାଙ୍କର ଜୀବନର ଗତିପଥ ସଂପୂର୍ଣ୍ଣ ବଦଳିଯାଇଥିଲା । ସେ ୧୯୧୭ ମସିହାରେ ସନ୍ନ୍ୟାସ ଆଶ୍ରମରେ ପ୍ରବେଶ କରି 'ସ୍ୱାମୀ ଶ୍ରଦ୍ଧାନନ୍ଦ' ନାମରେ ପରିଚିତ ହେବା ସଙ୍ଗେସଙ୍ଗେ ଦେଶ, ଜାତି, ଧର୍ମ ପାଇଁ ନିଜର ସର୍ବସ୍ୱ ସମର୍ପଣ କରିଥିଲେ ।

ସ୍ୱାମୀ ଶ୍ରଦ୍ଧାନନ୍ଦଙ୍କର ଦୃଢ ବିଶ୍ୱାସ ଥିଲା ଯେ ଦେଶବାସୀଙ୍କ ଚରିତ୍ର ନିର୍ମାଣ, ଅସ୍ପୃଶ୍ୟତା ନିବାରଣ ତଥା ସାମ୍ପ୍ରଦାୟିକ ସଦ୍‌ଭାବ ପ୍ରତିଷ୍ଠା ଦ୍ୱାରା ରାଷ୍ଟ୍ରିୟ ଏକତା ସ୍ଥାପିତ ହୋଇପାରିବ । ଗାନ୍ଧିଜୀଙ୍କର ହରିଜନ ଆନ୍ଦୋଳନର ଅନେକ ପୂର୍ବରୁ ସେ **'ଅଖିଳ ଭାରତ ଦଳିତ ଉଦ୍ଧାର ସଭା'** ଗଠନ କରିଥିଲେ । ତତ୍‌କାଳୀନ ସମାଜର ରକ୍ଷଣଶୀଳ ପରମ୍ପରାକୁ ଉଲଂଘନ କରି ତଥାକଥିତ ଅସ୍ପୃଶ୍ୟ ବାଳକମାନଙ୍କୁ ସ୍ୱପ୍ରତିଷ୍ଠିତ ଗୁରୁକୁଳରେ ଶିକ୍ଷାଦେଇ ସେମାନଙ୍କୁ ଚରିତ୍ରବାନ ବ୍ରହ୍ମଚାରୀ ତଥା ଶାସ୍ତ୍ରଜ୍ଞ ପୁରୋହିତ ରୂପେ ଗଢିତୋଳିଥିଲେ ଏବଂ ଅସ୍ପୃଶ୍ୟତା ନିବାରଣ ନିମନ୍ତେ ସେ ଅନେକ ପ୍ରକାର ଉଦ୍ୟମ କରିଥିଲେ । ବିଦେଶୀମାନଙ୍କ ଦ୍ୱାରା ଦେଶରେ ପାଶ୍ଚାତ୍ୟ ଶିକ୍ଷାର ପ୍ରସାର ଘଟୁଥିବା ବେଳେ ସେ ହରିଦ୍ୱାର ନିକଟସ୍ଥ କାଙ୍ଗଡିଠାରେ ଏକ ଗୁରୁକୁଳ ସ୍ଥାପନ କରି ପ୍ରାଚୀନ ଗୁରୁକୁଳ ଶିକ୍ଷା ପଦ୍ଧତିର ପୁନରୁଦ୍ଧାର କରିବା ସଙ୍ଗେ ସଙ୍ଗେ ବ୍ରହ୍ମଚର୍ଯ୍ୟ, ରାଷ୍ଟ୍ରଭାଷା ଓ ଦେଶାତ୍ମବୋଧର ଶିକ୍ଷା ପଦ୍ଧତି ଆରମ୍ଭ କରିଥିଲେ । ଯେଉଁ ଗୁରୁକୁଳ ବର୍ତ୍ତମାନ **'ଗୁରୁକୁଳ କାଙ୍ଗଡି ବିଶ୍ୱବିଦ୍ୟାଳୟ'** ରୂପେ ପରିଚିତ ।

୧୯୧୯ ମାର୍ଚ୍ଚ ୩୦ତାରିଖର ଘଟଣା, ସେ ଦିନ ବ୍ରିଟିଶ୍ ସରକାରଙ୍କର ରୌଲଟ ଆକ୍ଟ ବିରୁଦ୍ଧରେ ସମଗ୍ର ଦିଲ୍ଲୀରେ ଚାଲିଥାଏ ଆନ୍ଦୋଳନ । ଚାନ୍ଦିନିଚୌକଠାରେ ଥିବା ଘଂଟାଘର ନିକଟରେ ପ୍ରାୟ ୪୦ହଜାର ଲୋକଙ୍କର ସମାବେଶ ହୋଇଥାଏ । ଉପସ୍ଥିତ ସଂଗ୍ରାମୀମାନଙ୍କୁ ସ୍ୱାମୀଜୀ ଉଦ୍‌ବୋଧନ ଦେଉଥିବାବେଳେ ହଠାତ୍ ଗୁର୍ଖା ସିପାହୀମାନେ ବନ୍ଧୁକ ଧରି ଲୋକଙ୍କ ଉପରେ ଆକ୍ରମଣ ପାଇଁ ମାଡି ଆସିଥିଲେ ଉପସ୍ଥିତ ଜନତା ମଧ୍ୟ ପ୍ରତି ଆକ୍ରମଣ ପାଇଁ ଉଦ୍ୟତ ହେଉଥିବା ବେଳେ ଲୋକଙ୍କୁ ଆଦୌ ଅଗ୍ରସର ନ ହେବାପାଇଁ ନିବେଦନ କରି ସିପାହୀମାନଙ୍କ ଧମକ ସତ୍ତ୍ୱେ ଲୋକେ କିଛି ବିଚାର କରିବା ପୂର୍ବରୁ ଏହି ବୀର ସନ୍ନ୍ୟାସୀ ସିପାହୀମାନଙ୍କ ସମ୍ମୁଖକୁଯାଇ ସେମାନଙ୍କ ପଥରୋଧ କରି ନିଜର ବକ୍ଷ ଖୋଲିଦେଇ କହିଲେ – 'ନିରସ୍ତ୍ରଜନତାଙ୍କୁ ଗୁଳିକରିବା ପୂର୍ବରୁ ପ୍ରଥମେ ଏ ସନ୍ନ୍ୟାସୀର ବକ୍ଷରେ ଗୁଳିବିଦ୍ଧ କର ।' ଜଣେ ବୀର ସନ୍ନ୍ୟାସୀଙ୍କର ଏ ବଜ୍ର ଆହ୍ୱାନ ଶୁଣି ସିପାହୀମାନେ ସ୍ତବ୍ଧ ହୋଇଗଲେ କ୍ଷଣକ ମଧ୍ୟରେ ସେମାନଙ୍କ ସାହସ–ଦାମ୍ଭିକତା ପାଣି ଫୋଟକା ଭଳି ମିଳାଇଗଲା, ହାତରେ ଥିବା ବନ୍ଧୁକ ସବୁ ନିମ୍ନ ମୁଖୀ ହୋଇଗଲା ଏବଂ ସମଗ୍ର ଅ□ଳରେ ନିରବତା ଖେଳିଯାଇଥିଲା । ସତ୍ୟାଗ୍ରହର ଏହି ଘଟଣା ସମଗ୍ର ଦେଶରେ ପ୍ରଚାରିତ ହୋଇ ଲୋକଙ୍କ ମନରେ ଅଭୟ ବୀରତ୍ୱର ବାର୍ତ୍ତା ସଂଚାର କରିଥିଲା । ଦିଲ୍ଲୀର ଘଂଟାଘରଠାରେ ପ୍ରତିଷ୍ଠିତ ସ୍ୱାମୀଜୀଙ୍କର ବିଶାଳ ପ୍ରତିମୂର୍ତ୍ତି ଇତିହାସର ସେହି ଘଟଣାକୁ ଉଜ୍ଜିବୀତ କରି ରଖିଛି ।

ସ୍ୱାମୀ ଶ୍ରଦ୍ଧାନନ୍ଦଙ୍କର କୌଣସି ସମ୍ପ୍ରଦାୟପ୍ରତି ବିଦ୍ୱେଷ ଭାବ ନଥିଲା ତେଣୁ ଏହି ଘଟଣା ପରେପରେ ୧୯୧୯ମସିହା ଅପ୍ରେଲ ପ୍ରଥମ ସପ୍ତାହରେ ମୁସଲମାନ ଭାଇମାନେ ସ୍ୱାମୀଜୀଙ୍କୁ ଦିଲ୍ଲୀର ବିଶ୍ୱବିଖ୍ୟାତ ଜାମା ମସଜିଦ୍‌କୁ ଆମନ୍ତ୍ରଣ କରି ତାଙ୍କଠାରୁ ପ୍ରେରଣା ପ୍ରଦ ଉଦ୍‌ବୋଧନ ଶୁଣିଥିଲେ । ସ୍ୱାମୀଜୀ ପବିତ୍ର ବେଦମନ୍ତ୍ର ଉଚ୍ଚାରଣ କରି ହିନ୍ଦୁ ଓ ମୁସଲମାନମାନଙ୍କ ଈଶ୍ୱର ଏକ, ସମସ୍ତେ ଏକ ଈଶ୍ୱରଙ୍କ ସନ୍ତାନ ବୋଲି କହିଥିଲେ । ସ୍ୱାମୀ ଶ୍ରଦ୍ଧାନନ୍ଦ ଏକମାତ୍ର ଆର୍ଯ୍ୟ ସନ୍ନ୍ୟାସୀ ତଥା ଜାତୀୟ କଂଗ୍ରେସର ଜଣେ ଅଦ୍ୱିତୀୟ ଅଣମୁସଲିମ୍ ନେତା ଥିଲେ ଯେ କି ମୁସଲମାନ ନ ହୋଇ ସୁଦ୍ଧା ଜାମା ମସଜିଦ୍‌ର ପ୍ରାର୍ଥନା ସଭା ପରିଚାଳନା କରିଥିଲେ । ସ୍ୱାମୀଜୀଙ୍କର ଉଜ୍ଜ୍ୱଳ ଆଦର୍ଶ ଚରିତ୍ର ହିଁ ସମସ୍ତ ମତବଲମ୍ବୀଙ୍କ ପ୍ରିୟପାତ୍ରର କାରଣ ଥିଲା ।

ବିଦେଶୀମାନଙ୍କ ଆକ୍ରମଣ-ଅତ୍ୟାଚାର ତଥା ମିଥ୍ୟା ପ୍ରଲୋଭନ ଯୋଗୁଁ ଧର୍ମ (ସଂପ୍ରଦାୟ) ପରିବର୍ତ୍ତନ କରିଥିବା ଲକ୍ଷଲକ୍ଷ ନର-ନାରୀ ପୁଣି ସ୍ୱଧର୍ମକୁ ପ୍ରତ୍ୟାବର୍ତ୍ତନ କରିବାକୁ ଚାହୁଁଥିଲେ ବି ରକ୍ଷଣଶୀଳ ହିନ୍ଦୁଜାତିର ବଡପଣ୍ଡାମାନେ ସେମାନଙ୍କ ଆଗମନକୁ ପ୍ରତିରୋଧ କରୁଥିବାବେଳେ ସ୍ୱାମୀ ଶ୍ରଦ୍ଧାନନ୍ଦ ସେମାନଙ୍କୁ ସ୍ୱାଗତ କରି ସ୍ୱଧର୍ମ ପ୍ରତ୍ୟାବର୍ତ୍ତନ ବା ଶୁଦ୍ଧି ଆନ୍ଦୋଳନ ନାମରେ ଏକ ସମୟୋପଯୋଗୀ ଆନ୍ଦୋଳନ ଆରମ୍ଭ କରିଥିଲେ । ଏହି କାର୍ଯ୍ୟକୁ ବ୍ୟାପକ ରୂପ ଦେବାପାଇଁ ସ୍ୱାମୀଜୀ ୧୯୨୩ ମସିହାରେ ଆଗ୍ରାଠାରେ **'ଭାରତୀୟ ହିନ୍ଦୁ ଶୁଦ୍ଧିସଭା'** ନାମକ ଏକ ସଂଗଠନ ଗଢିଥିଲେ । ସ୍ୱାମୀଜୀଙ୍କ ପ୍ରଣୀତ ଶୁଦ୍ଧି ଆନ୍ଦୋଳନକୁ ଆଜି ଅନେକ ହିନ୍ଦୁ ସଂଗଠନ ଆଦରି ନେଇଛନ୍ତି । ଫଳରେ ଆଗାମୀ ଦିନରେ **'କଳାପାହାଡ'** ପରି ଖଳନାୟକମାନଙ୍କର ଆବିର୍ଭାବର ସମସ୍ତ ଆଶଙ୍କା ଦୂରହୋଇପାରିଛି ।

ସ୍ୱାମୀଜୀଙ୍କ ଶୁଦ୍ଧି ଆନ୍ଦୋଳନର ସଫଳତାରେ ଶଙ୍କିତ ହୋଇ ଅନେକ ମତାନ୍ଧ ମୁସଲମାନ ତାଙ୍କ ନିକଟକୁ ଧମକ ପୂର୍ଣ୍ଣ ବେନାମୀ ପତ୍ର ପଠାଉଥିଲେ ବି ସେ ନିର୍ଭୀକଭାବେ କାର୍ଯ୍ୟକରି ଚାଲିଥିଲେ । ପୁଣି ଅନେକ ମକଦ୍ଦମାର ସମ୍ମୁଖୀନ ହୋଇଥିଲେ ବି ସବୁଥିରେ ସେ ବିଜୟୀ ହୋଇଥିଲେ । ପରିଶେଷରେ ୧୯୨୬ ମସିହା ଡିସେମ୍ବର ୨୩ ତାରିଖ ସଂଧ୍ୟା ସମୟରେ ୭୦ବର୍ଷ ବୟସରେ ଅବ୍‌ଦୁଲ ରଶିଦ ନାମକ ଜଣେ ଧର୍ମାନ୍ଧ ଆତତାୟୀର ଗୁଳିରେ ଏହି ମହାନ୍ ସଂସ୍କାରକ, ଦଳିତୋଦ୍ଧାରକ, ମହାନ୍ କର୍ମଯୋଗୀ, ପ୍ରବଳ ପରାକ୍ରମୀ ବୀର ସନ୍ନ୍ୟାସୀ, ପ୍ରାଚୀନ ଗୁରୁକୁଳ ଶିକ୍ଷା ପଦ୍ଧତିର ପୁନରୁଦ୍ଧାରକ ସ୍ୱାମୀ ଶ୍ରଦ୍ଧାନନ୍ଦ ସହିଦ ହୋଇଯାଇଥିଲେ । ଏହି ମହାନ୍ କର୍ମବୀରଙ୍କର ଆଦର୍ଶ ଜୀବନ ଆମର ଅନୁକରଣୀୟ ହେଉ ଆଜିର ଏହି ବଳିଦାନ ଦିବସରେ ଏହା ହିଁ କାମନା ।

ସଂପାଦକ, ଶ୍ରୁତିନ୍ୟାସ
ଏଫ୍-୨୨, ସେକ୍ଟର-୧୮
ରାଉରକେଲା-୩, ୯୮୬୧୩୩୫୩୨୧

देश-धर्म का वह अद्भुत बलिदानी

– ए. कुमार

स्वामी श्रद्धानंद का नाम सामने आते ही हमारे सामने एक ऐसे महान् योद्धा की मूर्ति सम्मुख आकर खड़ी हो जाती है जिसमें निडरता, सहिष्णुता, करुणा, मानवता, पवित्रता और विद्या जैसे अनगिनत मूल्य समाहित हैं। जिसके सामने ब्रिटिश सत्ता स्वयं को किंमकर्तव्यविमूढ़ की दशा में पाती थी । जिसके रोम-रोम में स्व-धर्म, स्व-संस्कृति, स्व-भाषा, स्व-देश और स्वाभिमान भरा था। जिसने अन्याय, अनाचार, अविद्या और अंधविश्वास का जीवन-भर निर्भयता और सत्साहस के साथ विरोध किया और सत्य, ज्ञान, धर्म और मानवीय मूल्यों को स्थापित करने में अपना सारा जीवन लगा दिया । उस युग-पुरुष का नाम है **हुतात्मा स्वामी श्रद्धानंद** ।

भारत की डाँ वाडोल नैया के खेवैया बनकर निकले इस महाभाग का जीवन संघर्षों का पर्याय रहा, लेकिन कभी संघर्षों से डरकर भागे नहीं । दिल्ली की जामा मस्जिद की मिम्बर पर साम्प्रदायिक सद्भाव और जातीय एकता को सबल बनाने के उद्देश्य से अपने ऐतिहातिक भाषण के समय गोरखा सिपाहियों द्वारा सभा न करने की चेतावनी के बावजूद अपना भाषण दिया । उस समय का दृश्य कितना मर्मस्पर्शी रहा होगा जब वे सीना तानकर कहते हैं –लो चलाओ गोली। ऐसे न जाने कितनी घटनाएं हैं जो एक अमर आर्य वैदिक संन्यासी के सत्साहस, निर्भयता, पवित्रता और ईश्वर के प्रति समर्पण की याद दिलाते हैं । याद दिलाते हैं उनके शिक्षा, धर्म, विद्या, समाज व देशोपकारक वे सभी कर्म जो उन्होंने तब किया था जब हर तरह की प्रतिकूलताएं थीं । जंगल में मंगल की कहावत तो सभी ने सुनी है, परन्तु उसका मूर्त रूप कहीं देखना हो तो महात्मा मुंशीराम के जीवन-कार्यों में हम देख सकते हैं । वेद केवल पढ़ने और सुनने के लिए नहीं हैं, बल्कि वे मानव जीवन के सर्वोतम मार्ग-दर्शक हैं को यदि किसी युग पुरुष के जीवन में देखना हो तो अपने सामने ऋषि दयानंद के इस अद्भुत उत्तराधिकारी के जीवन में हम देख सकते हैं । यहीं तो मानव जीवन की रहस्यमयता है कि एक बिगड़ा हुआ व्यक्ति किसी देव पुरुष के सम्पर्क में आकर कितना ऊंचा उठ सकता है, इसे देखने के लिए स्वामी श्रद्धा का जीवन देखना ही होगा।

2 फरवरी 1856 में तलवन पंजाब में जन्म लेने वाला एक साधारण सा बालक कुसंगति के कारण इतना गिरा कि वह जब उठने लगता है तो उसे आश्चर्य होता है, वह कैसे इतना बदल गया जिसपर लोगों को यकीन ही न हो । यही बदलाव तो मानव को महामानव बनाता है ।

हम उन्हें गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के संवाहक कहें, अनेक गुरुकुलों के संस्थापक, जिसमें गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय प्रमुख है, एक महान् शिक्षाविद् कहें, धर्म-रक्षक कहें, देश की आजादी के महान् योद्धा कहें या शुद्धिकरण का अग्रदूत, कुछ भी कहें, वे सब कुछ के अतिरिक्त और भी बहुत कुछ थे जिसका वर्णन दो-चार पंक्तियों में संभव ही नहीं है । उनमें देश, समाज, संस्कृति, धर्म, शिक्षा, नारी उत्थान और गिरे-मजलूमों के प्रति अखंड संवेदना तो थी ही, मानव समाज के समग्र कल्याण के सूत्र भी जो ऋषि दयानंद से प्राप्त किए थे, जीवन-भर जीते रहे और समाज को देते रहे । यही तो युगधर्मिता का भाव-बोध है ।

छोटे से जीवन में इतने कार्य कि लोग सहज विश्वास भी सहज न करें, यह महानता का द्योतक नहीं तो और किसका है। क्रांति किसे कहते हैं, यदि देखना हो तो महात्मा मुंशीराम के जीवन में हमें आकर देखना ही पड़ेगा । पत्रकारिता के माध्यम से जनजागरण, बिछुड़ों के शुद्धिकरण के माध्यम से अपनों को समाज में यथायोग्य जगह और सम्मान दिलाने के लिए जान की बाजी तक लगा देना, कांग्रेस के माध्यम से देश

की सेवा करने का व्रत, गांधी को महात्मा कहकर उनका सम्मान बढ़ाने की पवित्र भावना, दलितों, वंचितों, असहायों, महिलाओं और बच्चों को वैदिक शिक्षा के माध्यम से देश और समाज के लिए तैयार करने जैसे ऐतिहासिक कार्यों को हम गिनाते जाएं तो पता चलेगा, इस वैदिक मिशनरी ने कितने कार्य, एक साथ किए । ऐसे सद्संकल्प के दृढ़व्रती के जीवन में विश्राम तो है ही नहीं।

पत्रकारिता को देश, समाज और संस्कृति जागरण का माध्यम बनाने वाले इस महामानव ने उस समय अंग्रेजों के छल-छद्म, क्रूरता, भेदभाव, पशुता, निर्दयता, शोषण, जुल्म, अमानवीयता और भारत को अनंत काल तक गुलाम बनाने की मंशा के विरोध में हजारों के मध्य बिना एक पल रुके ललकारते रहना उन्होंने अपने पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से किया। पत्रकारिता क्या होती है और पत्रकार व संपादक का समाज और देश के प्रति क्या दायित्व होता है, इसे हम स्वामी श्रद्धानंद की पत्रकारिता में पाते हैं । कभी अंग्रेजों से डरकर कोई भी समाज-देश विरोधी बात या कार्य एक बार भी जीवन में नहीं किया। वेद का एक पूर्ण यज्ञयीय जीवन जिया और मरे भी तो ऐसे कि महात्मा गांधी को भी सोचने को मजबूर कर दिया। सद्धर्म प्रचारक हो या शुद्धि , दोनों पत्रों में उन्होंने समाज और देश-हित को सर्वोपरि रखा । उनके समय में ही कांग्रेस में मुस्लिम तुष्टिकरण की नीति प्रारम्भ हो चुकी थी, इसी कारण उन्हें विवश होकर कांग्रेस से अलग होना पड़ा। लेकिन उनके समाज व देश के कार्य निरंतर चलते रहे। यही कारण कांग्रेस के कुछ संकुचित दिमाग के लोग उनके कार्य़ों की आलोचना किया करते थे । सत्य का ग्रहण और असत्य से दूर रहने वाले इस युग-योद्धा ने जीवन में कभी गलत से समझौता नहीं किया।

स्वामी श्रद्धानंद ने कांग्रेस छोड़ने के बाद अपना पूरा ध्यान शुद्धि आंदोलन में लगा दिया । उन्होंने शुद्धि आंदोलन के माध्यम से जबरन मुसलिम और ईसाई बने हिंदू भाइयों के पुनः हिंदू बनने का रास्ता साफ कर दिया । इससे हजारों की संख्या में लोग हिंदू बनने लगे । जिसकी सराहना मदन मोहन मालवीय, वीर सावरकर और उस समय के अनेक देश भक्तों ने की । जब देश-समाज इधर-उधर भटक रहा हो तो बांसुरी नहीं बल्कि तप और त्याग की आवश्यकता होती है । इस बात को स्वामीजी अपने पत्रों के अतिरिक्त अपने प्रवचनों और भाषणों में कहा करते थे । आलस्य- प्रमाद को त्यागकर देश-समाज का हित किया जा सकता है । **वे कहा करते थे- यदि देश-समाज की सेवा जीवन का उद्देश्य हो तो जीवन कितना छोटा होता है।**

और शुद्धि आंदोलन, समाज सुधार, नारी – दलित उत्थान, वैदिक शिक्षा प्रणाली को आगे बढ़ाने और कौमी एकता का यह मसीहा संघर्षों से जूझता रहा । समाज में ऐसे अराजक तत्व भी होते हैं जो समाज और मानव निर्माण के कार्यों का विरोध करते हैं । ऐसा ही एक विरोधी हत्यारा अब्दुल रशीद था, जितने चांदनी चौक में एक धर्म चर्चा के बहाने 23 दिसम्बर 1926 को गोली मार दी । गोली खाकर यह महामानव हमेशा के लिए अपने अधूरे कार्यों को समेटे बिना हमारे बीच से चल बसा।

****

आर्ष क्रान्ति पत्रिका के लिए आर्य लेखक बन्धु अपनी सर्वश्रेष्ठ रचनाएँ भेंजे।

23 दिसम्बर बलिदान दिवस पर विशेष

आत्मप्रज्ञा के अद्वितीय दिव्यात्मा स्वामी श्रद्धानंद

तमसो मा ज्योतिर्गमय और असतो मा सद्गमय के पथानुगामी स्वामी श्रद्धानंद के नाम का स्मरण आते ही एक ऐसे दिव्यात्मा निर्भीक महामानव का चेहरा सामने आ जाता है जिसने भारत में विदेशी फिरंगियों से लोहा ही नहीं लिया बल्कि विदेशी शिक्षा प्रणाली, विदेशी संस्कृति और विदेशी मत के खिलाफ देशभर में एक अलख जगाई। देश, धर्म, भाषा और संस्कृति के उन्नयन के लिए किये जाने वाले महान कार्य हों या इनके लिए जीवन न्योछावर कर आने वाली पीढ़ी के लिए एक प्रेरणा और संदेश देने का जज्बा दोनों से युग को नई रौशनी मिलती ही है। स्वामी श्रद्धानंद ऐसे ही महामानव थे। दलितों, महिलाओं, अनाथों और शोषित जनों के लिए महर्षि दयानंद के द्वारा शुरू किये गए कार्य को स्वामी जी ने पूरे मनोवेग से आगे बढ़ाया। वेद ही सृष्टि के ईश्वर के द्वारा दिए गए ज्ञान के जिस आलोक को वैदिक ऋषि–मुनियों ने आत्मसात् करके जगत् के सर्वकल्याण और सर्वरक्षा हेतु प्रचारित–प्रसारित किया, उसे महर्षि दयानंद ने आर्य समाज के माध्यम से आगे बढ़ाया था। स्वामी श्रद्धानंद इसी राह के महामानव थे। उन्होंने समाज के हर वर्ग, जाति और संस्कृति के लोगों को मानवता का संदेश दिया। यही कारण था हिंदू और मुसलमान तथा अन्य मजहब को मानने वाले लोग स्वामीजी को अपना सर्वमान्य नेता स्वीकार करते थे। भारत के इतिहास में वे पहले योद्धा थे जिन्होंने दिल्ली की जामामस्जिद के प्राचीर पर खड़े होकर हिंदू और मुसलमानों को वेद मंत्रों के पाठ के बाद एक साथ संबोधित किया था। भारतीय जनमानस के लिए ही नहीं बल्कि विश्व जनमानस को भी सबक लेने का उक्त दृश्य की कल्पना मात्र से रोमांच दिल में उठ जाता है। जाहिर–सी बात है, एक धर्म–योद्धा के अंदर ही ऐसी निर्भीकता पैदा हो सकती है।

उन्नीसवीं सदी का वह काल जब सारा भारत वर्ष एक गहरे अंधकार में भटक रहा था। विदेशी गुलामी के कारण सारा समाज कहीं रास्ता नहीं ढूढ पा रहा था तभी महर्षि दयानंद एक आशा की किरण बनकर अवतरित हुये। स्वामी श्रद्धानंद ने दयानंद से ही मानव कल्याण और देशरक्षा तथा संस्कृति रक्षा का पाठ पढा था। इस बात को स्वामी श्रद्धानंद मानते भी थे। उन्होंने अपनी जीवनी 'कल्याण मार्ग का पथिक' में महर्षि दयानंद के महतोमहान् कृतित्व और व्यक्तित्व को याद करते हुये लिखा है– ऋषिवर! तुम्हें भौतिक शरीर त्यागे 41 वर्ष हो चुके, परंतु तुम्हारी दिव्य मूर्ति मेरे हृदय पटल पर अब तक ज्यों की त्यों अंकित है। कितनी बार गिरते–गिरते तुम्हारे स्मरण मात्र ने मेरी आत्मिक रक्षा की है। ......तुम्हारे सत्संग ने मुझे कैसी गिरी हुई अवस्था से उठाकर सच्चा लाभ करने के योग्य बनाया। ये पंक्तियां इस बात को बता रही हैं कि किसी दिव्यात्मा का किसी जिज्ञासु को जब सत्संग मिलता है तो उसकी किस प्रकार से काया पलट हो जाती है– स्वामी श्रद्धानंद का सारा जीवन इस बात का प्रमाण है।

बचपन में स्वामीजी मुंशीराम नाम से जाने जाते थे। इनके पिता अंग्रेजी शासन में मुलाजिम थे। लेकिन स्वामी श्रद्धानंद ने इस बात की परवाह कभी नहीं की। वकालत की शिक्षा पूरी करने के बाद कुछ दिन वकालत तो किया लेकिन दयानंद की छाप उनके अतःकरण में इस तरह पड़ चुकी थी कि उन्होंने वकालत छोड़कर आजादी की लड़ाई में ही नहीं बल्कि समाज, शिक्षा, स्व–भाषा, स्व–धर्म, स्व–संस्कृति के उत्थान के लिए स्वयं को समर्पित कर दिया। हरिद्वार में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना ही नहीं देश के दूसरे अंचलों में भी इसी तरह के वैदिक प्राणली व पद्धति पर

आधारित शिक्षा–केंद्रों की स्थापना की। कांग्रेस के अधिवेशनों में वे स्वागताध्यक्ष हुआ करते थे। एक तरफ जहां वे कांग्रेस के साथ मिलकर आजादी की लड़ाई लड़ रहे थे वहीं पर दूसरी तरफ वे क्रांतिकारी आंदोलन (अब संस्था के रूप में) आर्य समाज के जरिए भी 'स्व' का जागरण कर रहे थे। यानी धर्म, समाज, भाषा, संस्कृति, शिक्षा और स्वदेशी की अलख जगाने में लगे थे। उन्हें आजादी की लड़ाई के दौरान 1922 ई. में अंग्रेजी हुकूमत ने गिरफ्तार कर लिया, लेकिन इससे उनमें देश और समाज सुधार के प्रति जज्बा हजार गुना और बढ़ गया। वे जेल से छूटने के बाद देश और समाज को गुलामी से छुड़ाने के लिए सक्रिय हो गए।

स्वामी श्रद्धानंद सत्य और करुणा के आराधक थे। दया, क्षमा, अहिंसा, न्याय, प्रेम और सहिष्णुता जैसे सदगुण उनके रोम–रोम में भरे हुये थे। वेदों में वर्णित त्रैतवाद के दर्शन– ईश्वर, जीव और प्रकृति को मानने वाले और अंग्रेजी की जगह हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने के प्रबल समर्थक स्वामीजी के कार्यों से गांधी, पटेल, मौलाना आजाद और तत्कालीन कांग्रेस के बडे नेता प्रभावित थे। यही कारण है कि गांधी जी सहित तमाम नेता गुरुकुल कांगड़ी आया जाया करते थे और स्वामीजी के साहस, जीवंतता और संघर्ष की तारीफ किया करते थे। एक जगह गांधीजी ने लिखा है– हमें स्वामी श्रद्धानंद के कार्यों और साहस से सीख लेनी चाहिए। एक व्यक्ति एक संस्था कैसे बन सकता है, श्रद्धानंद उसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।'

स्वामीजी का मानना था कि ईश्वर पर विश्वास करके ज्ञान और सत्य के साथ आगे बढ़ने वाला व्यक्ति कभी जीवन में हार नहीं सकता है। निराशा, हताशा और अन्य ऋणात्मक शब्द उनके जीवन में कभी भी दिखाई नहीं पड़ते हैं। स्वामीजी का जीवन ऐसा ही था। सांप्रदायिक एकता और भाई चारे बनाए रखने के संकल्प के साथ स्वामीजी के कार्यों को पढकर आज की पीढ़ी यह प्रेरणा तो ले ही सकती है कि किस प्रकार से वेद और सत्य के रास्ते पर चलकर स्वयं का कल्याण नहीं बल्कि सारी मानवता का कल्याण किया जा सकता है। किस प्रकार मतांधता को दूर कर समाज को सही रास्ता दिखाया जा सकता है। और किस तरह आत्मकल्याण का पथिक बनकर जीवन के चारों पुरुषार्थो–धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त किया जा सकता है। जाहिरतौर पर, स्वामीजी ने जंगल में मंगल करके एक चमत्कार ही कर दिखाया था। सांप्रदायिक सदभावना फैलाने वाले इस दूत से अनेक मतांध व्यक्ति उनकी खिलाफत भी करते थे। कुछ तो उनकी हत्या करने के लिए अवसर ढूढते रहते थे। एक ऐसे ही मतांध व्यक्ति ने 23 दिसंबर 1926 को चांदनी चौक दिल्ली में गोलियों से भून कर उनकी हत्या कर दी। लेकिन उनका बलिदान बेकार नहीं गया। आज भी चांदनी चौक में 'स्वामी श्रद्धानंद चौक' इसके ज्वंलत प्रमाण के रूप में हमारे सामने है।

बलिदान देकर उन्होंने देश को देश–प्रेम, सत्याचरण, सद्ज्ञान और वेद–धर्म और संस्कृति की रक्षा का जो संदेश दिया वह आज भी सारे समाज के लिए प्रेरणा का स्रोत है। उनकी आत्माकथा 'कल्याण मार्ग का पथिक' आज के भटके हुये नवजवानों के लिए बहुत बड़ी रौशनी साबित हो सकती है। जरूरत इस बात की है कि उनके कृतित्व और व्यक्तित्व को इतिहास के पन्नों के अलावा जीवन के पृष्ठ भी बनाए जाएं। ******************

www.ved-yog.com

(वेद योग चौरीटेबल ट्रस्ट द्वारा संचालित)

चारों वेद, महर्षि दयानन्द के वेदभाष्य सहित, तथा वेदों का अंग्रेजी अनुवाद, महर्षि दयानन्द का सम्पूर्ण साहित्य, दर्शन, उपनिषद् तथा अन्य आर्ष ग्रन्थ वेबसाईट पर निःशुल्क उपलब्ध।

ब्रह्मांड के आठ आधार

– प्रज्ञा पिपासु

जिन आठ आधारों को वेद में ब्रह्मांड का आधार माना गया है वे मानव प्रगति और कल्याण के लिए भी आवश्यक माने गए हैं। वे आठ तत्त्व हैं–**सत्य, उद्यम, ऋत्, उग्र(तेज), दीक्षा, तप, ब्रह्म और यज्ञ।** ये तत्त्व देश और समाज को उत्तम बनाने के साथ ही साथ मनुष्य के जीवन को भी पावन बनाते हैं। मतलब इन आठों के द्वारा परिवार, समाज, राष्ट्र और सारी धरती को सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम् बनाया जा सकता है। समाजहित में आठ आधारों (तत्त्वों) में पहला आधार या तत्त्व सत्य को बताया गया है। व्याकरण के अनुसार सत्य शब्द अस्तीति सत् और सतः भावः सत्यम् अर्थात् जिसकी सत्ता है, वह सत्य है से भाषित होता है। **सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। सत्येनोत्तभिता भूमि** यानी यह धरती सत्य के सहारे ही टिकी हुई है या सत्य ने भूमि को उठाया हुआ है। महर्षि दयानन्द ने सत्य की परिभाषा करते हुए सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है– जो वस्तु जैसी है वैसी ही मानी जाए, कही जाए, लिखी जाए और पढ़ी जाए वह सत्य कही जाती है। महात्मा गांधी ईश्वर और सत्य को एक दूसरे का पर्यायवाची मानते थे। इन परिभाषाओं से यह पता चलता है कि सत्य राष्ट्रोन्नति का परम आधार या तत्त्व ही नहीं है बल्कि व्यक्ति परिवार और समाज की प्रगति और कल्याण के लिए भी बहुत आवश्यक है। समाज और राष्ट्रहित का दूसरा सोपान सूत्र है–**उद्यम। उद्योगिनं पुरुष सिंहमुपैति लक्ष्मीः दैवेन देयमिति कापुरुषाः वदन्ति।** यानी लक्ष्मी सम्पत्ति, समृद्धि और परिश्रम करने वाले उद्यमी पुरुष का ही वरण करती हैं। इस लिए आलस्य, प्रमाद छोड़कर पुरुषार्थ करना चाहिए। भाग्य के सहारे बैठने वालों को कभी कुछ प्राप्त नहीं होता है। वेद में उद्यम और पुरुषार्थ के बारे में बहुत ही प्रेरक संदेश दिया गया है। **कुर्वन्नवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।** अर्थात् काम करते हुए ही हर मनुष्य को सौ वर्षों तक जीने की इच्छा करनी चाहिए। इतना ही नहीं कर्म करने वालों को कर्मवीर कह कर पुकारा गया है– **कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो में सव्य आहितः** यानी कृतत्त्व हमारे दाहिने हाथ में है सफलता, हमारे बाए हाथ में है। कहने का मतलब यह है कि पुरुषार्थ और उसके फल में उतनी ही दूरी है जितनी बाएं और दाहिने हाथ में।

भारत में उद्यम यानी पुरुषार्थ की जगह भाग्यवाद ने लिया हुआ है। आज भी अधिकांश लोग भाग्य का रोना रोते हैं। स्वामी विवेकानंद कहते थे भाग्य का निर्माण ईश्वर नहीं बल्कि कर्म के द्वारा होता है। यह हम क्यों नहीं विचार करते की बिना हाथ से भोजन का कौर उठाए मुंह में नहीं जा सकता तो बगैर पुरुषार्थ किए भला लक्ष्मी कैसे प्राप्त हो सकती है। कामचोरी, आलस्य, प्रमाद और दूसरों के धन और सम्पत्ति चुराकर संसाधनों को बटोरने की यह वृति मनुष्य–वृति का सूचक नहीं बल्कि राक्षसी–वृति का परिचायक है। मतलब देश और समाज को खुशहाल और प्रगतिगामी बनाने के लिए सच्चे उद्यम के अलावा ओर दूसरा कोई रास्ता नहीं है। समृद्ध और खुशहाल जगत् का तीसरा आधार **ऋत** बताया गया है। वेद में कहा गया है ईश्वर ने अपने ज्ञानमय तप से ऋत और सत्य को उत्पन्न किया। ऋत प्रकृति का वह शाश्वत नियम है जिसका पालन करना उतना ही आवश्यक है जितना सत्य बोलना। यह सारी सृष्टि ईश्वरीय नियमों से ही संचालित हो रही है। ये ईश्वरीय नियम ही प्रकृ–ति के नियम कहलाते हैं। इनके पालन करने से ही विश्व, देश और समाज का कल्याण और प्रगति हो सकती है। सर्वहित का चौथा आधार या तत्त्व है–**तेजस्विता** अर्थात् तेज। समाज के हर इंसान में तेजस्विता का होना बहुत आवश्यक बताया गया है। केवल वेद में ही नहीं बल्कि बौद्ध और सिख मतावलम्बी भी तेजस्विता को बहुत आवश्यक मानते हैं। तेजस्विता का साधारण रूप से जोश के साथ कार्य करना कह सकते हैं। बिना जोश के बड़े–सा–बड़ा लक्ष्य पूरा नहीं किया जा सकता है। जोश ही आलस्य और प्रमाद को समाप्त करता है। जिस देश के नागरिकों में देश और समाज के प्रति

जोश नहीं होता वह समाज और देश झील की ही स्थिति में रह जाता है। **दीक्षा** देश और समाज के प्रगति का महत्त्वपूर्ण पांचवा तत्त्व है। देश और समाजोन्नति के लिए शुभ संकल्प लेना ही राष्ट्र–दीक्षा कहलाती है। मतलब व्रत के द्वारा देश और समाज के मंगल कार्यों के लिए पवित्र मन से समर्पित हो जाना दीक्षा कहलाती है। छात्र जीवन में संयम नियम और सत्य वाचन का व्रत लेते हुए अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए पूर्णपन से लग जाना दीक्षा है। उसी प्रकार हर देशवासी को भी देशोन्नति के लिए व्रत लेकर अपने कर्तव्य के प्रति समर्पित हो जाना चाहिए। अभीष्ठ की प्राप्ति तभी हो सकती है।

छठा तत्त्व **समाजोन्नति** का तप बताया गया है। तप को राष्ट्र की निधि कहा गया है । साधारणतौर पर तितिक्षा सहन करना तप है। शास्त्र में कहा गया है – **तपः स्वधर्म वर्तित्वम् और तपः स्वकर्म वर्तित्वम्** अर्थात् सभी को अपने धर्म और कर्म का पूरी निष्ठा और सहिष्णुता के साथपालन करना तप कहलाता है। देश में जो जिस कार्य को कर रहा है उसे बहुत ईमानदरी और परिश्रम के साथ करता रहे यह उसका तप है। चाहे कितनी भी कठिनाई आए या जितना लोभ दिया जाए उसे नजरअंदाज करके अपने कर्तव्यों का सम्यक पालन करते जाएं यह ही सांसारिक जीवन में तप है।

सातवां तत्त्व है–**ब्रह्म।** ब्रह्म को वेद में ज्ञान–विद्या कहा गया है। सब कुछ ठीक होते हुए भी यदि हमारे अन्दर ज्ञान की कमी है तो हम वह नही प्राप्त कर सकते जिसको प्राप्त करना चाहते हैं। विद्या शब्द विद् धातु से बना है। जिसका अर्थ होता है जानना। साधारणतौर पर बहुत गहरा नहीं लगता है, लेकिन जब कार्य और शिक्षा के लिए यह प्रयोग किया जा रहा हो तो यह बहुत गहराई ले लेता है। यह जानना कि मैं कौन हूं यह जानना कि हमारे जीवन का लक्ष्य क्या है, यह जानना कि देश और समाज के प्रति हमारे क्या कर्तव्य हैं इसकी जानकारी बिना विद्या–ज्ञान के क्या हो सकती है। इस लिए इसे राष्ट्र का महत्त्वपूर्ण आधार माना गया है। विद्या का मतलब केवल किताबी ज्ञान नहीं है बल्कि अपनी शारीरिक, मानसिक, आत्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तत्त्वों की ठीक जानकारी होना चाहिए। इससे हमारी सर्वोन्नति हो सकती है। इसके लिए तप की आवश्यकता पड़ती है इसलिए तप को भी राष्ट्रोन्नति का आधार माना गया है।

और आठवां तत्त्व **यज्ञ** बताया गया है। यज्ञ शब्द यजन धातु से बना है। जिसका अर्थ होता है करना। वैसे आमतौर पर यज्ञ का अर्थ हवन या अग्निहोत्र जाना जाता है। शास्त्र में यज्ञ का अर्थ **देवपूजा, संगतिकरण और दान** वर्णित है। देवपूजा का मतलब पूज्य का पूजन और अपूज्य का त्याग करना। संगतिकरण का अर्थ विभिन्न वर्गों और स्वार्थों का संतुलन और दान का अर्थ होता है–अपनी उपलब्धि में से देश के लिए बिना स्वार्थ के त्याग करना। समाज का आम आदमी किस तरह राष्ट्र–यज्ञ में अपनी आहुति दे सकता है और छात्र किस प्रकार राष्ट्र–यज्ञ सम्पन्न कर सकता है, विचार करना चाहिए। *******

सद्‌विचार

आँखों का पानी मरा, मरी शर्म और लाज।
कहे बहू अब सास से, घर में मेरा राज।।

भाई भी करता नहीं, भाई पर विश्वास।
बहन पराई हो गई, साली खासमखास।।

मंदिर में पूजा करे, घर में करे क्लेश।
बापू तो बोझा लगे, पत्थर लगे गणेश।।

बचे कहाँ अब शेष हैं, दया, धरम, ईमान।
पत्थर के भगवान हैं, पत्थर दिल इंसान।।

पत्थर के भगवान को लगते छप्पन भोग।
मर जाते फुट पाथ पे भूखे, प्यासे लोग।।

फैला है पाखंड का अंधकार सब ओर।
पापी करते जागरण मचा–मचाकर शोर।।

पहन मुखौटा धर्म का, करते दिनभर पाप।
भंडारे करते फिरें, घर में भूखा बाप।।

कथा क्रान्ति

उसका अपना सच

– अखिलेश आर्येन्दु

उस रात वह बहुत देर से घर पहुंची। मां किसी अनहोनी को लेकर बहुत परेशान हो गई होगी। उसे इस बात का आभास था, फिर भी उसे देर हो ही गई। मां की चिंता जायज थी। समाज में किसी का मुंह तो नहीं बंद कराया जा सकता ना। देर रात घर लौटना आज के समय में कितना खतरनाक है। फिर, लोगों को क्या, लोगों को तो कुछ मसाला चाहिए जिससे चटकोरियां लेकर चर्चा कर सकें। ऐसे परिवार के बारे में ज्यादा ही चर्चा होती है, जहां केवल मां–बेटी रह रही हों।

यह सब जानते हुए भी वह ऑफिस से घर लौटने में इतनी देर क्यों कर देती है? एक–दो दिन की बात नहीं है। वह करे भी तो क्या करे, उसका कार्य ही ऐसा है कि न चाहते हुए भी देर हो ही जाती है।

सुबह जल्दी उठना। घर का सारा काम निपटाना। दोनों छोटे भाइयों को तैयार करके स्कूल भेजना, फिर आनन–फानन में ऑफिस भागना। रोज का यही रूटीन है। इसी भागदौड़ में वह अपनी जिंदगी के बारे में न तो कुछ सोच पाती है और न ही आगे किसी अन्य कार्य की योजना ही बना पाती है। हालात से समझौता करना उसे गंवारा नहीं, लेकिन ऐसे में जब परिवार का सारा बोझ कंधों पर आ पड़ा हो, तब हालात से एक नहीं न जाने कितने समझौते करने पड़ते हैं। वह मुखौटा लगाकर भी तो नहीं चल सकती। जिस मुखौटे का उसने हर समय विरोध किया उसी को वह जिंदगी को बेहतर बनाने के नाम पर लगाए? यह प्रश्न उसके चेतना में ऐसे फिट हो गया हो, जैसे बिजली के तार में बिजली ऑन कर दी गई हो, जो बहुत शक्तिशाली होते हुए भी दिखाई नहीं देती है।

आज ही क्यों, यह तो रोजाना की बात है, जब वह घर से निकलती है मां बार–बार सहेजती है–बेटी, घोड़े–गाड़ियों को देखकर जाना। जमाना बहुत खराब है, किसी पर एतबार करने का समय नहीं रहा। अपरोक्ष रूप में वह बेटी को किसी अनजाने से रिश्ता बनाने से बचने की हिदायत। वह जानती है, समाज की चाल–ढाल। लेकिन इसी समाज में तो रहना है। यदि जिंदगी जीना है, परिवार चलाना है तो हर किसी पर अविश्वास भी तो नहीं किया जा सकता है। दुख–सुख में आखिर किसी न किसी का सहारा चाहिए ही, ऐसे में ऑफिस का ही कोई अपना हो, तो इसमें बुराई क्या है।

उस दिन रात के ग्यारह बज गए। दस बजे की बाद खाना खाना उसे अच्छा नहीं लगता। उसे याद है जब बापू जिंदा थे। कहा करते थे–जल्दी सोना...जल्दी उठना सेहत के लिए मुफीद होता है। आयुर्वेद में कहा गया है, रात का भोजन सात बजे तक और सोना नौ बजे तक ठीक रहता है। खाने और सोने में कम से कम दो–तीन घंटे का अंतर होना चाहिए। बापू के बताए ये सेहत के फार्मूले उसे आज भी उसी तरह याद हैं। लेकिन बापू के जाने के बाद तो सब उल्टा–पुल्टा हो गया। न समय से खाना और न समय से सोना। फिर सोने में देर होगी तो नींद कैसे पूरी होगी? यह उसके अपने सवाल हैं जिसे सालों से हल करने की कोशिश कर रही है, लेकिन आज तक हल नहीं हुए।

उसके छोटे भाई रोज अपनी प्यारी दीदी का इंतजार करके सो जाते हैं। मां भी इंतजार करते–करते थक गई है। रोजाना का इंतजार कितना तनाव पैदा करता है, यह तो वही जानता है जो अपनो का बेसब्री से इंतजार करता है। मां बिना बेटी को खिलाए आज भी नहीं खाती। उसकी जिंदगी की यही तो एक सहारा है, जिसने उसके हर कदम को सहारा दिया और कभी झुझलाई नहीं।

'सुमन! बेटा आज इतनी देर कैसे हो गई? तुम्हारे दोनों भाई तुम्हारा इंतजार करते–करते बहुत कहने पर सोए, वरना वह भी सोने वाले कहां थे। मां का प्यार भरा उलाहना सुनकर सुमन ने केवल 'सॉरी मां' कहा और रसोई में खाना निकालने चली गई। वैसे तो शहरों की जिंदगी ही देर–सबेर वाली होती है। हर कोई का यही हाल। न घर पहुंचने का कोई टाइम और न खाना खाने और सोने का ही।

सुमन ऑफिस से छूटने के बाद झुग्गियों में बच्चों को पढ़ाने जाती है। यह उसकी रुचि का विषय है। बापू के रहते ही उसने यह काम शुरू कर दिया था। यदि बच्चों को न पढ़ाए, तो उसे लगता है– उसका दिन बेकार चला गया। एक तरफ ऑफिस दूसरी तरफ झुग्गियों में बच्चों के बीच, वह कैसे दोनों में सतुंलन बिठा पाती है, यह तो वही जानती है।

झुग्गियों का समाज और यहां की जीवन शैली शहरी जिंदगी से एकदम अलग। लेकिन जब से टीवी ने पांव पसारा है, वहां भी धीरे–धीरे शहर की हवा घुसती जा रही है। सुमन ने तो इस बदलाव को बहुत पास से देखा है। उसे यह देखकर संतोष होता है कि जिसे सभ्य समाज कीड़े–मकोड़े समझता है, वहां कुछ नहीं तो संवेदना तो बची है। लोग एक दूसरे को जानते–मानते हैं। सुख–दुख में एक दूसरे के सहभागी बनते हैं। क्या यह सभ्यता का सबसे महत्वूपर्ण हिस्सा नहीं? इस सवाल का उत्तर वह जानना चाहती है, लेकिन किससे पूछे। अपने आप से या उन सभ्य लोगों से जो गरीब लोगों से बात करने में अपनी तौहीनी समझते हैं।

मां को सुमन के बारे में बस इतना पता है कि उसकी लाडली ऑफिस में स्टेनो की नौकरी करती है जिसके बूते जिंदगी सरक रही है। मां को सुमन के दूसरे कार्य के बारे में पता नहीं है। उसे यह डर है कि जिस दिन मां को उसके दोहरे कार्य के बारे में पता चलेगा, उस दिन, वह उसे माफ नहीं करेगी। बिना कुछ लिए–दिए यूं ही ट्यूशन पढ़ाने की बात आज के जमाने में?

वह खाना महज पांच मिनट में ही खाकर फुरसत हो जाती है। यह जानते हुए कि उसका पाचन ठीक नहीं है और डॉक्टर अपेनडिश का ऑरेशन कराने की बात कह चुके हैं। लेकिन आदत ऐसी पड़ गई है कि उसे ध्यान ही नहीं रहता कि जिस भोजन को वह पांच मिनट में गले के अंदर सरका लेती है उसे आराम से 20–25 मिनट में खाना उसकी सेहत के लिए जरूरी है। कम से कम भागदौड़ वाली जिंदगी में खाना तो बिना हड़बड़ाए करे।

मां अभी खा ही रही थी कि किसी ने कमरे की बेल बजाई। कौन हो सकता है इतनी रात गए! कहीं, घनश्याम तो नहीं! लेकिन इतनी रात में उसका क्या काम हो सकता है! संशय पर संशय। उसने थोड़ी देर इंतजार करना बेहतर समझा। फिर बेल बजी। उसने खिड़की खोलकर देखा, उसका संदेह सच था। घनश्याम बाहर खड़ा था। लेकिन, उसके साथ में दूसरा कौन हो सकता है?

'सुमन बेटा कौन है, कुछ पता चला।' हां मां, घनश्याम है।' सुमन ने दबी जुबान से जवाब दिया।

'घनश्याम!' यह कौन है बेटी?'

'मां, मेरे ऑफिस का लड़का है।'

'लेकिन इतनी रात में?' स्वर में संदेह छलक रहा था।

सुमन ने कोई जवाब नहीं दिया। वह मां से क्या झूठ बोले कि ऐसे ही इधर से वह गुजर रहा था या फिर.....!

मां को इतना तो समझ में आ गया था कि सुमन जिस ऑफिस में काम करती है उसके जान पहचान का कोई सहकर्मी है। लेकिन रात में आने का क्या मतलब हो सकता है? यह सवाल बूढ़ी को बार–बार परेशान कर रहा था।

नारी की जिंदगी भी कितनी जटिलताओं, संघर्षों और कष्टों से होकर गुजरती है। बचपन में माता–पिता के संरक्षण में, शादी होने के बाद पति और फिर बूढ़ापे में पुत्र के संरक्षण में रहने की उसकी आदत बन जाती है। बिजली की तार की तरह हमेशा खंभे में टंगे रहकर कभी खंभे और बिजली से सवाल करना भी अपराध बन जाता है। लेकिन इस सच को वह जानती है कि भले ही वह बिजली का तार हो लेकिन उसके बिना न तो खंभे का कोई मूल्य है और न तो बिजली का ही। वही तो शक्ति का आधार है। उसके टंगे रहने से यदि परिवार और समाज को शक्ति मिलती है तो इसमें बुराई क्या है? सुमन, इन्हीं विचारों में झूलते–झूलते सो गई।

अभी भोर होने को है। चार बजने वाले होंगे। आश्चर्य है, उसकी नींद ठीक चार बजे ही खुल जाती है। सोचती है, उठकर करेगी भी क्या? जब कालेज नहीं जाना है, आगे कोई बड़े ओहदे के लिए परीक्षा में नहीं बैठना है फिर माथा मार कर क्या करेगी? तभी उसे याद आया। अपने स्वर्गीय पिता की वे बातें जिसे वह बार–बार दुहराती रहती थी। कहीं, शायद बड़े काम की थी वे बातें। लेकिन तब उसके अर्थ वह नहीं समझ पाई थी। पिता का साया उठते ही जब गृहस्थी का सारा बोझ उसके कंधों पर आ पड़ा, तब उसे पिता के वे वचन याद आने लगे थे –बेटी! यह दुनिया एक सरकस की तरह है। कभी कोई ऊपर जाता है तो कभी नीचे। कभी मुत्यु के कुंए का सामना करना पड़ता है तो कभी जलती मसाल में से गुजरना पड़ता है। लेकिन हार नहीं मानना चाहिए। बिना संघर्ष के न तो सोहरत मिलती है और न तो धन ही। मेहनत की कमाई से बढ़कर जीवन में कोई दूसरा रास्ता नहीं, जो जीवन के अर्थ को ठीक–ठीक समझाए।

बचपन से बीस साल तक की जिंदगी का उसका सफर। कितने उतार–चढ़ाव देखें हैं उसने, लेकिन उसने हार भी तो नहीं मानी। अकेले दम पर मां को संभालते हुए, दो छोटे भाइयों(झुग्गियों में असहाय दो लड़कों का भार) को पाल–पोश कर बड़ा किया। अब अपने दम पर अच्छी सी अच्छी शिक्षा दिलाने का उसका संकल्प साधारण तो नहीं था, लेकिन उसने कभी इस बात पर विचार नहीं किया। बचपन में पिता का साया उठ जाना और जीविका का कोई स्थिर बंदोबस्त न होना, आज के जमाने में कितना दुखदाई होता है– सुमन ने इसे सहा–बहा है। झुग्गी बस्ती के माहौल को वह बचपन से ही देखती आ रही है। उसने वहां की संस्कृति, कला, जीवन शैली और लोगों के विचारों को समझा–बूझा है। उसने सभ्य समाज को भी देखा है और उस समाज को जिसे सभ्यता से दूर समझा जाता है को भी समझा है।

उसे याद है मुंह बोले मास्टर जी की भलमनसाहत। बेचारे बिना फीस लिए मेहनत के साथ उसे पढ़ाते थे। उनकी ही तो मेहनत का फल है कि एक अति साधारण घर की बेटी एक नामीगिरामी ऑफिस में स्टेनो बन पाई है। उनकी ही प्रेरणा से उसने सीखा था–तुम्हें जैसे बिना किसी स्वार्थ के किसी ने विद्या का दान दिया है, तुम भी

किसी का सहारा बनो। दोनों बच्चे मास्टर साहब ने ही तो गंदे नाले से उठाकर ले आए थे। झुग्गी में उनका परिवरिश करने वाला तब कोई नहीं था। बूढ़े मास्टरजी बच्चों को कहां ले जाते। पुरुष का काम बच्चों की परिवरिश करने का तो नहीं। उसमें वैसी ममता कहा, वैसा वात्सल्य कहां। यह तो कुदरत ने नारी को ही सौपी हुई है। मां की मर्जी से दोनों बच्चों को वह घर ले आई थी और सगे भाइयों की तरह उनको संभालने लगी थी। लेकिन, इस सच को उसके मां के अलावा कोई नहीं जानता कि उसके दोनों भाई, उसके सगे नहीं है। वह अब जहां रहती है, वहां सभी यही जानते हैं।

रोज की तरह सुबह हुई। वह उठी और काम में लग गई। दीपू और महेश स्कूल जाने के लिए तैयार होने लगे। मां उन्हें कुछ बता रही है। पूछ भी रही है। अरे, दीपू तूने होम वर्क किया की नहीं?...अरे महेश, तुम तो जल्दी सो जाते हो? होमवर्क करना याद नहीं रहा होगा? नहीं आजी। मैंने होमवर्क कर लिया है। सुबह जो जल्दी उठ गया था। आप तो टहलने चली गई थी, तब। हूं..समझ गई। आजी ने ऐसे सिर हिलाया जैसे वह पहले से ही इस बात को जानती रही हों।

अभी वह गुसलखाने में ही थी कि फोन की घंटी बजी। मां ने फोन उठाया। कौन हो सकता है, नहाते–नहाते वह सोचने लगी। कहीं घनश्याम तो नहीं।

'हलो,...हलो...कौन ?' मां ने पूछा।

'अरे, थोड़ा तेज बोलो भाई।

'हां, अरे सुमन मैं राकेश। भूल गई क्या? इतनी जल्दी, तुम तो कुछ भूलती नहीं, अब नाम तक भूल गई। फोन करने वाले ने एक ही बार में न जाने कितनी बातें कह डाली। साथ में शाम को रेस्टोरेंट पर डिनर पर चलने का प्यारा सा निमंत्रण भी लगे हाथ।

''कौन था मां फोन पर?'' सुमन ने भावुकता को दबाते हुए पूछा।

''बेटी, सुन नहीं पाई ठीक से। लेकिन किसी लड़के की आवाज लग रही थी।'' मां ने बात को दबा दिया।

सुमन को यह बात समझ में आ गई, मां को उसके देर से आने का सच का पता चल गया है। लेकिन, मां तो कह रही थी, वह साफ–साफ कुछ सुन नहीं सकी! कहीं, यह पता चल गया कि उसके जीवन में कोई आ गया है जिसका जिक्र तक उसने मां से नहीं किया है तो..? यही कि मां के मन में एक अविश्वास पैदा होगा। ऐसा अविश्वास जिसके बारे में उसने कभी सोचा नहीं रहा होगा। लेकिन उसकी भी तो अपनी जिंदगी है। अपना हित–अहित सब समझती है। हां, उसने किसी को धोखा तो नहीं दिया। कोई धोखा दे गया तो? ऐसे कई प्रश्न उसके मन में उमड़ने लगे थे।

खुश रहने और दुख में मुस्कराने की आदत जिसने बना लिया हो उसके लिए सुख क्या...दुख क्या। सुमन का स्वभाव भी कुछ इसी तरह का था। उसके पिता जीत सिंह ने उसके इस स्वभाव के कारण ही उसका नाम सुमन रखा था। मां बड़े प्यार से सुमना कहा करती है।

रोजाना की बात और थी, आज की बात और। राकेश का डिनर का निमंत्रण ठुकरा भी तो सकती है। वह कह सकती है, मां की तबियत ठीक नहीं है। उसके भाई अभी इतने छोटे हैं कि उनपर पढ़ने–लिखने के अलावा अतिरिक्त बोझ नहीं डाला जा सकता है। लेकिन आज तो बहाना बना ले, कल क्या कहेगी यह सोचकर परेशान हो गई।

उसने अपने स्वप्न के बारे में आज तक मां से चर्चा तक नहीं की। जिस मां से कोई बात छिपाना अपराध मानती थी, उसी मां से इतने महत्वपूर्ण बात को छिपाने का उसका क्या मतलब।

यह वही राकेश है जो झुग्गियों में कभी रहकर दीनहीन परिवारों के बच्चों को संस्कार और शिक्षा देने का कार्य किया करता था। सुमन को उसका यह कार्य बहुत अच्छा लगता है। उसे लगता है , समाज में ऐसे लोग अब कहां मिलेंगे जो मलिन बस्तियों में बिना किसी अतिरिक्त स्वार्थ के बच्चों को अच्छे संस्कार देने के लिए अपनी जवानी का कीमती समय दे। ऐसे परोपकारी के साथ उसका रहना कितना अच्छा होगा। इसी स्वप्न में वह वर्षों से डूबती–उतराती रही है।

ऑफिस से आई तो आज भी मां उसका उसी तरह से इंतजार कर रही थी। उसे यह यकीन हो गया कि मां को राकेश की कही बातें वाकई में सुनाई नहीं पड़ी होगी। लेकिन, ...? इस सवाल पर अभी नहीं सोचना है, फिर फोन आएगा तो वह सोचेगी।

राकेश जिस रेस्टोरेंट में चलने की बात कह रहा था, वह उसके परिवार से ही ताल्लुक रखता था। लेकिन यह तो उसका एक बहाना भी हो सकता है, उसे अपने दिल की बात कहने का। सच जो भी हो, राकेश का भी स्वप्न सुमन की जिंदगी में आना है और सुमन का भी सच यही है। लेकिन दोनों के सच अभी दूर हैं। यह दूरी मन की नहीं समाज की है। सुमन इस बात को अच्छी तरह जानती है। जाति–बिरादरी में कुल–गोत्र वगैरह का महत्व भले ही कम हो गया हो लेकिन अभी खत्म तो नहीं हुआ है।

मां से सच कब कहे, मां तो हमेशा यही कहती रही बेटा, जब परिणय सूत्र में बधना हो बता देना, मुझे बहुत खुशी होगी। लेकिन फिर यह हिदायत किस लिए कि बेटा, दुनिया बड़ी फितरतबाज है। आज के लड़कों पर विश्वास जल्दबाजी में करने का मतलब धोखा खाने की दावत खुद देना। दोनों बातों का मायने सुमन जानती है। उसे पता है, मां कितनी उदार विचारों की है, लेकिन राकेश के परिवार वाले क्या उसी तरह के हैं? यह सोचकर उसने शायद मां से कभी अपने स्वप्न नहीं बताए।

आज वह बहुत खुश है। उसे मां से अपने मन की बात कहना है। लेकिन मां क्या सोचेगी। आज तक सुमन ने उसकी पसंद–नपसंद के बारे में नहीं पूछा, अब क्यों पूछ रही है। फिर भी मां से पूछने का हौसला कर ही लिया। आफिस से लौटने के बाद उसने पहला प्रश्न यही किया। तब मां बोली, बेटी सुमना! यह क्या कह रही हो। मेरी पसंद–नपसंद क्या तुमसे अलग है? जो भी तुम खाना–पहनना चाहो, सब कर सकती हो। जहां तक मेरे लिए अलग से करने की बात है, अब इस उमर में कुछ मुझे नहीं चाहिए। बस, तुम्हारे हाथ पीले कर दूं, अपने फर्ज से फारिग हो जाऊंगी। सुमन ने मां से पहली बार जब अपनी शादी की बात सुनी तो उसे हैरानी हुई। मां ने कभी उससे इस तरह की बातें नहीं की थी कि वह मां के लिए एक फर्ज पूरा करने की चुनौती बनी हुई है।

''मां, कोई गलती हो गई हो तो क्षमा कर देना।'' सुमन ने भावुकता से कहा।

''कैसी बात कर रही हो बेटी आज। तुमने आज तक इस तरह की बात नहीं की। क्या मेरे से अनजाने में कोई भूल हो गई है?''

''नहीं मां, भूल तो मुझसे हुई है। मैंने एक बात जो अभी तक छिपाई रखी, उसको लेकर मैं साहस नहीं कर पा रही रही हूं कि कैसे आप से कहूं।''सुमन की आवाज भर्रा गई थी।

''कहो बेटी। बेटी मां से अपने दिल की बात नहीं कहेगी तो किससे कहेगी। ऐसी कौन सी बात है जिसे सुनकर मैं तुमको अपनी नजरों से गिरा देती।''

''मां, सच ....सच बताऊं। मैं आप को नहीं खोना चाहती। मैं चाहती हूं कि आप की हर पसंद और नपसंद पर पूरा ध्यान रखूं। मैं ऑफिस से रोजाना देर से आती हूं। लेकिन आप ने आज तक ऐसा कोई सवाल नहीं किया कि मुझे असमंजस में ढकेलता।''

बेटी की बात जितना मां गहराई से समझ सकती है भला और कौन समझ सकता है। मां को समझ में आ गया कि सुमन के जीवन में कोई आ गया है। लेकिन इस बात को यह छिपाती क्यों है? क्या किसी से प्रेम करना अपराध है? फिर इस ईश्वरीय वरदान को इसने मुझसे क्यों छिपाया? मुझे तो सुनकर बहुत खुशी होती।

राकेश ने खुलकर सुमन से अपने दिल की बात कह दिया था। अब गेंद सुमन के पाले में थी। सुमन यह नहीं कहना चाहती थी कि अपने दायित्वों को तिलांजलि देकर वह अपने सुख के लिए परिवार के कर्तव्यों को छोड़ सकती है। उसके स्वभाव और संस्कार में यह है भी नहीं। लेकिन वह राकेश को क्या जवाब दे, यह उसकी सबसे बड़ी उलझन है। इसी उलझन में वह कई दिनों से परेशान है। लेकिन मां को बताकर उन्हें अपने सुख के लिए उलझाए, यह कहां की अक्लमंदी है।

मां ने एक दिन खुलकर सुमन से कह दिया, ''बेटी! तुम शादी योग्य हो गई हो। शादी कर लो। जहां जिससे कहोगी, मैं उससे करने के लिए तैयार हूं। बस, इतना ध्यान रखना, अभी तुम्हारे कर्तव्य पूरे नहीं हुए हैं। दो छोटे भाई हैं जिसकी हर तरह की जिम्मेदारी तुमने ली हुई है। शादी के बाद क्या इस जिम्मेदारी को वैसे ही निभा पाओगी, जैसे अभी निभा पा रही हो?''

मां की आइना दिखाने वाली बातें सुनकर सुमन को अपने कर्तव्य भूलने का जो अपराधबोध हुआ उससे वह बहुत बिचलित हुई। अरे, वह राकेश को अब क्या जवाब देगी कि वह जो वादा की थी उसे निभाने में अभी असमर्थ है। उसके जीवन का सच, जिसे राकेश देख नहीं पा रहा है उसे पूरा करना उसका पहला कर्तव्य है।

हां, राकेश के परिवार वाले क्या उसे हमेशा के लिए अपनी बहू के रूप में स्वीकार कर लेंगे। जाति–बिरादरी,कुल–गोत्र और धनी–निर्धन जैसे भेदभावों को वे नजरअंदाज कर देंगे? ऐसे अनेक प्रश्न राकेश को लेकर सुमन के मन में घुमड़ते रहे। उन बादलों की तरह जो घुमड़ते तो हैं लेकिन हवा के एक झोंके में कहीं दूर जाकर अपना वजूद खो देते हैं।

****

CITC-FR344 प्रवेश की जांच करे वेबसाईट Https://citcchandigarh.com पर

Microsoft | MSME | रा.इ.सू.प्रौ.सं NIELIT | CITC | TNV AB-CAB | CSC | ICDL

PG EDUCATION FOUNDATION

H No 4729 Sant Namdav Nagar Shimpi Samaj Colony offside D Y S P Office Basar Road Dharmabad , City : Nanded, State : Maharashtra - 431809 Mob :7798881410, 9665774640

03 Month's course

- CERTIFICATE IN COMPUTER BASIC
- CERTIFICATE IN DESKTOP PUBLISHING
- COURSE ON COMPUTER CONCEPT
- CERTIFICATE IN BASIC HARDWARE
- CERTIFICATE IN COMPUTER CONCEPT
- CERTIFICATE IN GRAPHIC DESIGN
- CERTIFICATE IN FINANCIAL ACCOUNTING
- COMPUTER TYPING COURSE IN ENGLISH (30 WPM)
- COMPUTER TYPING COURSE IN MARATHI (30 WPM)
- COMPUTER TYPING COURSE IN HIND (30 WPM)

06 Month's course

- EXPERT COMPUTER CONCEPTS
- DIPLOMA IN COMPUTER APPLICATION
- DIPLOMA IN FINANCIAL ACCOUNTING
- DIPLOMA IN OFFICE AUTOMATION
- ADVANCED DIPLOMA IN COMPUTER APPLICATION
- DIPLOMA IN WEB DESIGNING
- DIPLOMA IN OFFICE MANAGEMENT
- DIPLOMA IN HARDWARE AND NETWORKING
- DIPLOMA IN INFORMATION TECHNOLOGY
- COMPUTER TYPING COURSE IN ENGLISH (40 WPM)
- COMPUTER TYPING COURSE IN MARATHI (40 WPM)
- COMPUTER TYPING COURSE IN HIND (40 WPM)

01 year's course

- ADVANCED DIPLOMA IN COMPUTER APPLICATION
- ADVANCED DIPLOMA IN INFORMATION TECHNOLOGY
- ADVANCED DIPLOMA IN COMPUTER APPLICATION AND HARDWARE NETWORKING
- DIPLOMA IN COMPUTER TEACHER TRAINING
- DIPLOMA IN COMPUTER APPLICATIONS & TYPING
- ADVANCED DIPLOMA IN COMPUTER HARDWARE AND NETWORKING

®CITC-The Hub of IT (A venture of Chandigarh ETC Services. Pvt. Ltd.) is an Autonomous Institute Regd . under Companies act .1956 by Govt . of India - Ministry of Corporate Affairs (Corporate ID No. U72900CH2009 PTC031886) CITC - is an ISO 9001 : 2015 Certified Organisation since 2009, Authorized MICROSOFT Education Partner (V112396) for training & Sale of Microsoft Products. We are Recognized by ICDL & NIELIT Reg. No. 88004804. MSME Reg. No. CH01D0000795 & CSC Reg. No. 267201470012. It Provides Computer Education both in Online & Offline mode. There are more than 70 + Computer Software & Hardware Courses

महादेव मंदिरके सामने कॉलेज रोड, धर्माबाद जि. नांदेड (महाराष्ट्र)

(मो 7798881410, 9665774640)